वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय
कोटा

एम.जे.एम.सी. 2
फीचर लेखन एवं पत्रिका संपादन
(Feature Writing & Magazine Editing)

फीचर लेखन एवं पत्रिका संपादन-2

पत्रकारिता एवं जनसंचार स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम
(Master of Journalism & Mass Communication)

फीचर लेखन एवं पत्रिका संपादन 2

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

एम. जे. एम. सी. - 2

फीचर लेखन एवं पत्रिका संपादन

पत्रकारिता एवं जनसंचार स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम

विविध क्षेत्रों के लिए फीचर लेखन - 2

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

- **प्रो. जी.एस.एल. देवड़ा**
  कुलपति
  कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा
  (अध्यक्ष समिति)
- **डॉ. ए. डबल्यू. खान**
  कुलपति
  इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
  नई दिल्ली
- **राधेश्याम शर्मा**
  पूर्व-महानिदेशक
  माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता
  विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
- **डॉ. ओ.पी. केजरीवाल**
  महानिदेशक, महानिदेशालय आकाशवाणी
  नई दिल्ली
- **प्रो. ए.के. बनर्जी**
  पूर्व-अध्यक्ष, पत्रकारिता विभाग
  बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय
  वाराणसी
- **प्रो. जे.एस. यादव**
  निदेशक
  भारतीय जनसंचार संस्थान
  नई दिल्ली
- **डॉ. भंवर सुराणा**
  ब्यूरो चीफ/ विशेष संवाददाता
  दैनिक हिंदुस्तान
  जयपुर
- **डॉ. रमेश जैन**
  अध्यक्ष-जनसंचार विभाग
  कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा

संयोजक

डॉ. रमेश जैन - अध्यक्ष, जनसंचार विभाग
कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ-संपादक एवं भाषा-संपादक

डॉ. विजय कुलश्रेष्ठ
सहआचार्य एवं विभागाध्यक्ष
सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर -303001

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) नरेश दाधीच	**प्रो.(डॉ.)एम.के. घड़ोलिया**	**योगेन्द्र गोयल**
कुलपति	निदेशक(अकादमिक)	प्रभारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	**संकाय विभाग**	**पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन - अप्रैल 2012

सर्वाधिकार सुरक्षित : इस सामग्री के किसी भी अंश की वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। कुलसचिव व.म.खु.वि. कोटा द्वारा वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.) के लिये मुद्रित एवं प्रकाशित ।

एम. जे. एम. सी. -2

फीचर लेखन एवं पत्रिका संपादन

पाठ्यक्रम - द्वितीय
खण्ड (2)

2

इकाई 6 भारत में मुक्त लेखन	9–19
इकाई 7 उद्योगों के लिए लेखन	20–31
इकाई 8 कृषि के लिए लेखन	32–47
इकाई 9 पर्यावरण के लिए लेखन	48–63
इकाई 10 फिल्मों के लिए लेखन	64–72
इकाई 11 बच्चों के लिए लेखन	73–91

पाठ लेखक

1. **डॉ. विजय कुलश्रेष्ठ**
सहआचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
सुखड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

2. **श्याम माथुर**
उप संपादक
राजस्थान पत्रिका
जयपुर

3. **डॉ. विष्णु पंकज**
वरिष्ठ साहित्यकार, पत्रकार
जयपुर

4. **रामकुमार**
पत्रकार, लेखक
कोटा

5. **हमीदुल्ला**
हिन्दी नाटककार
जयपुर

6. **डॉ. रीतारानी पालीवाल**
रीडर, हिन्दी विभाग
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

7. **डॉ. सुरेन्द्र विक्रम**
अध्यक्ष-हिन्दी विभाग
क्रिश्चियन डिग्री कॉलेज, लखनऊ(उ.प्र.)

8. **डॉ. राधामोहन श्रीवास्तव**
अध्यक्ष, कृषि अर्थशास्त्र विभाग
बड़हलगंज, गोरखपुर(उत्तर प्रदेश)

9. **डॉ. कैलाश पपने**
विशेष संवाददाता
दैनिक हिन्दुस्तान, नई दिल्ली

10. **सुभाष सेतिया**
संपादक 'आजकल'
प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय
पटियाला हाउस, नई दिल्ली

11. **डॉ.लक्ष्मीकांत दाधीच**
प्राध्यापक, वनस्पति शास्त्र विभाग
राजकीय महाविद्यालय कोटा

12. **दीनानाथ दुबे**
पत्रकार, लेखक
कोटा

13. **राधेश्याम तिवारी**
जनसंचारकर्मी एवं लेखक
जयपुर

14. **श्रीमती सुषमा जगमोहन**
संध्या टाइम्स
बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली

15. **सत सोनी**
संपादक- संध्या टाइम्स
बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली

16. **डॉ. रमेश जैन**
अध्यक्ष, जनसंचार विभाग
कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा

खण्ड परिचय

प्रथम खण्ड में आप फीचर और फीचर के विविध प्रकारों तथा अच्छे फीचर लेखन की विशेषताओं से परिचित हो चुके है तथा भली-भांति जान चुके हैं कि समाचार तथा अन्य लेखन से फीचर किस प्रकार भिन्न एवं महत्वपूर्ण विधा है ।

इस द्वितीय खंड में विविध क्षेत्रों के लेखन पर विचार किया जा रहा है । फीचर के अतिरिक्त भी पत्र- पत्रिकाओं में खेलकूद, आर्थिक, उद्यम, वाणिज्य, विज्ञान, पर्यावरण के लिए भी निरन्तर कुछ न कुछ प्रकाशित होता है । इस प्रकार का लेखन जहां नियमित या वैतनिक रूप में कार्यरत पत्रकार करते हैं तो कुछ लेखन स्वतत्र लेखक या फ्रीलांस राइटर करते हैं ।

इस खण्ड में जहां स्वतत्र लेखन उसके महत्व तथा सीमाओं का अध्ययन आप करेंगे, उसके साथ- ही इन विविध क्षेत्रों के लिए विविध प्रकार के लेखन से भी पूरी तरह परिचित हो सकेंगे ।

इकाई परिचय

दूसरे खंड की निम्नलिखित इकाइयों में वर्गीकृत करके लेखन की विविधता का परिचय आप पाएंगे-

इकाई 6 - भारत में स्वतंत्र लेखन पर आधारित है । स्वतंत्र लेखक किसी संस्था या अनुबन्ध के अन्तर्गत कार्य नहीं करता है । मुक्त या स्वतंत्र पत्रकार या लेखक का अर्थ इस इकाई में आप पाएंगे । स्वतंत्रता के बाद जो विकास पत्रकारिता के क्षेत्र में हुआ है, उसमें स्वतंत्र लेखन की सम्भावनाएं भी बढ़ी है तो कठिनाइयों भी बढ़ी है । अत: स्वतंत्र पत्रकारिता के वर्तमान और भविष्य के सम्बन्ध में आप विस्तार से अध्ययन करेंगे ।

इकाई 7 - उद्योगों के लिए लेखन से संबंधित है । इस इकाई में आप उद्योग का अर्थ, परिभाषा के साथ औद्योगिक व्यवस्था का प्रादुर्भाव, स्वरूप एवं वर्गीकरण आदि के विषय में सविस्तार अध्ययन करेंगे । इसके साथ ही भारत के औद्योगिक पिछड़ेपन और राष्ट्रीय नीति विकास संबंधी सुझावों के स्तर पर किस प्रकार का लेखन किया जाता है, जान सकेंगे ।

इकाई 8 - कृषि लेखन से जुड़ी हुई हैं । हमारे देश में कृषि-लेखन का विशेष महत्व है । इस इकाई में कृषि लेखन के विभिन्न बिन्दुओं पर प्रकाश डाला गया है । कृषि एक उद्योग बन गया है । कृषि-पत्रिकाओं से आपकी क्या अपेक्षा है? - जान सकेंगे । कृषि-पत्रिका के लिए लेखन करते समय किन-किन बातों की सावधानियाँ रखनी चाहिए?

इकाई 9 - पर्यावरण लेखन से संबंद्ध है । इस इकाई में पर्यावरण-लेखन के विभिन्न पहलुओं का विवेचन किया गया है, जैसे-पर्यावरण क्या समाचार है? पर्यावरण जीवन का यथार्थ, पर्यावरण लेखन से गुणात्मकता का प्रसार आदि । इस इकाई के अध्ययन के बाद आप पर्यावरण-लेखन के बारे में विस्तार से जान सकेंगे ।

इकाई 10 - फिल्म लेखन की है । फिल्मों पर लेखन एक लोकप्रिय विषय है । युवा वर्गों में फिल्मों के प्रति झुकाव, जिज्ञासा आज भी बनी हुई है । यही कारण है कि फिल्म पत्र-पत्रिकाओं की मांग बढ़ती जा रही है । आप इस इकाई में फिल्म लेखन के बारे में विस्तार से जानेंगे । यह इकाई आप को फिल्म लेखन पर सहायक सिद्ध होगी ।

इकाई 11 - बच्चों के लिए लेखन से संबद्ध है । बच्चों के लिए लिखना एक कला है । इस इकाई में आप जानेंगे कि बाल साहित्य का स्वरूप और महत्व क्या है? बच्चों के लिए लेखन में ध्यान रखने योग्य बातें क्या है? बाल साहित्य की उपादेयता क्या है?

हमारे यहां आज भी बाल-पत्रिकाएं दिखाई देती हैं, आर्थिक-कारणों से अनेक बाल-पत्रिकाएं बंद हो गई है । इस विषय पर भी चिंतन आवश्यक है ।

इकाई 6 भारत में मुक्त लेखन (फ्रीलांसिग)

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 मुक्त लेखन अर्थ एवं स्वरूप

6.2.1 आजादी के बाद परिवर्तन

6.2.2 कठिनाईयां और संघर्ष बनाम स्वतंत्र पत्रकारिता

6.2.2.1 प्रतिस्पर्धात्मक समता का अभाव

6.2.2.2 अनिश्चय और शोषण की ।स्थितियां

6.2.2.3 अल्प और अनिश्चित पारिश्रमिक

6.2.3 स्वतंत्र पत्रकारिता का पेशा कष्टप्रद

6.3 स्वतंत्र पत्रकारिता की समस्याएं

6.3.1 क्षमता का पुरस्कार नहीं

6.3.2 पहचान का संकट

6.3.3 राष्ट्रीय चिन्ता का अभाव

6.4 स्वतंत्र पत्रकारों को अन्य सुविधाएं देने की मांग

6.4.1 वेतन संबंधी सुविधा

6.4.2 वातावरण निर्माण

6.4.3 सम्मानयुक्त कार्यशुलता

6.5 स्वतंत्र पत्रकारों की दयनीय दशा

6.6 सारांश

6.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.8 निबंधात्मक प्रश्न

6.0 उद्देश्य

अभी तक आपने देखा और पढ़ा है कि लेखन कार्य का दायित्व पत्र संपादक अथवा पत्रिका की मांग के अनुसार किसी स्थायी तथा मान्य लेखक या डेस्क पर स्थापित पत्रकार या व्यक्ति से लिखाए जाते हैं । लेकिन कुछ सक्रिय एवं स्थायी स्तम्भ लेखक के रूप में निरन्तर मुक्त या स्वतंत्र लेखन कार्य अपनाकर अपने विवेक, कार्येच्छा एवं विशेष दृष्टि से लेखन कार्य पूरा करते हैं । अत: इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान सकेंगे कि-

- मुक्त या स्वतंत्र लेखन क्या होता है तथा किन्हें मुक्त पत्रकार या फ्रीलांस जर्नलिस्ट कहते
- मुक्त लेखन की स्थितियां क्या है । मुक्त लेखक को किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है ।
- मुक्त या स्वतंत्र पत्रकारिता की समस्याओं का परिचय भी पा सकेंगे ।
- मुक्त पत्रकार या मुक्त लेखकों के भविष्य की सम्भावनाएं भी आप जान सकेंगे ।

6.1 प्रस्तावना

1.1 पत्रकार का कर्म

पत्रकारिता वह धर्म है जिसका संबंध पत्रकार के उस कर्म से है जिसके अन्तर्गत वह तात्कालिक घटनाओं और समस्याओं को सबसे अधिक सही, निष्पक्ष विवरण के साथ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है । इस कर्म में सूचना देना और जनमत जागृत करना शामिल है । पत्रकारिता का लक्ष्य आम आदमी को एक दृष्टि देना है जिसके माध्यम से वह विभिन्न स्थितियों को स्पष्ट, तथ्यात्मक ढंग से देख सके और परख सके । इस प्रकार पत्रकारिता का कर्म सत्य को लोगों के समक्ष रखना है । इस सत्य को उद्घाटित करने का कार्य एक स्वतंत्र समाज में ही संभव है । इस दृष्टि से पत्रकारिता का कर्म एक स्वतंत्र कर्म है । पत्रकारिता अपने आप में मुक्त-लेखन है । लेकिन पत्रकारिता के क्षेत्र में 'मुक्त-लेखन' या स्वतंत्र-पत्रकारिता जैसे शब्दों का प्रयोग एक विशेष अर्थ में किया जाता है । अंग्रेजी में स्वतंत्र-पत्रकारिता के लिए 'फ्रीलान्सिंग' या 'फ्रीलान्स जर्नलिस्ट' शब्दों का प्रयोग किया जाता है । यहा प्रश्न उत्पन्न होता है कि जब पत्रकारिता का कर्म अपने आप में एक मुक्त लेखन है तो स्वतंत्र पत्रकारिता जैसे शब्द का प्रयोग क्यों किया जाता है?

1.2 मुक्त (फ्रीलांस) पत्रकार : सेवा नियमों से मुक्ति

पत्रकारिता के क्षेत्र में विभिन्न समाचारपत्रों, इलेक्ट्रोनिक माध्यमों आदि में कार्यरत पत्रकारों का कर्म किसी संस्थान या संस्था में सेवा नियमों में बंधा रहता है और ऐसे पत्रकार वेतन भोगी होते हैं । लेकिन इन विभिन्न माध्यमों की सेवाओं से मुक्त रहकर निरन्तर पत्रकारिता के कर्म में संलग्न रहने वाले अनेक लोग भी है । इस प्रकार स्वतंत्र रूप से पत्रकारिता के कर्म से जुड़े लोगों को स्वतंत्र पत्रकार या 'फ्रीलान्स जर्नलिस्ट' की संज्ञा दी जाती है और किसी संस्था या संस्थान की सेवा में न रहकर, मुक्त रूप से विभिन्न समाचारपत्रों के लिए समाचार, फीचर या अन्य प्रकार के आलेख प्रस्तुत करने से संबंधित समस्त पत्रकारिता कर्म को 'मुक्त लेखन' या स्वतंत्र पत्रकारिता या 'फ्रीलांसर' का संबोधन दिया जाता है ।

'फ्रीलांसर' का अर्थ ऐसे पत्रकार अथवा फीचर लेखक से लिया जाता है, जो किसी संस्थान का वेतन भोगी और नियमित सेवा कर्मी नहीं हो

6.2 मुक्त लेखन (फ्रीलान्स) : अर्थ एवं स्वरूप

अंग्रेजी में प्रयुक्त शब्द 'फ्री' यानी 'स्वतंत्र' और 'लांस अर्थात् 'भाला' या 'बर्छा' इन दो शब्दों की संधि से 'फ्रीलांस' शब्द बना है । यहां अंग्रेजी शब्दों को देखें तो एक प्रकार का विरोधाभास सामने आता है । भाले या बर्छे का उपयोग तो पालतू पशुओं या दासों को नियन्त्रित करने या उनकी स्वतंत्रता पर अंकुश लगाए जाने के लिए किया जाता रहा है । लेकिन यहाँ फ्रीलांस का अर्थ स्वतंत्र रूप से कॉलम की नोक के सहारे जिन्दगी के सफर तय करने के लिये मुक्त रूप से कॉलम की नोक का इस्तेमाल करने के सन्दर्भ में इस शब्द का अर्थ लिया जाना चाहिए क्योंकि पत्रकारिता का संपूर्ण लक्ष्य, किसी की स्वतंत्रता का हनन करना, उसको आघात पहुँचाना या किसी की स्वतंत्रता प्र अंकुश लगाना नहीं है बल्कि इसके विपरीत पत्रकारिता का उद्देश्य तो सत्य का उद्घाटन करना, जनभावनाओं को समझना, उन्हें अभिव्यक्ति देना, वांछित भावनाओं को उत्प्रेरित करना, सामाजिक बुराइयों पर प्रहार करके समाज

को स्वच्छ एवं स्वस्थ दिशा प्रदान करना है । आम आदमी की स्वतंत्रता एवं उसके अधिकारों की रक्षा की बात को वाणी प्रदान करना है । यही लक्ष्य स्वतंत्र पत्रकारिता या स्वतंत्र पत्रकार का है । अत: बुराई या विकृति पर प्रहार करने के अर्थ में कलम को 'लांस' या 'बर्छा' कह सकते हैं ।

'फ्रीलान्स' शब्द की इस प्रकार व्याख्या किए जाने के प्रसंग में 'स्वतंत्र' या 'मुक्त' वह व्यक्ति है जो किसी संस्थागत सेवा के नियमों से मुक्त है । लेकिन उसकी भी इस स्वतंत्रता की एक सीमा है । उस पर भी आय या आमदनी की अनिश्चितता का अंकुश है ।

भारत जैसे विशाल देश मैं पत्रकारिता के लिए विस्तृत क्षेत्र पड़ा है । स्वतंत्रता के बाद हजारों समाचारपत्रों एवं पत्रिकाओं का उदय हु आ है । पत्रपत्रिकाओं की भीड़ में खड़े उस व्यक्ति की आंखों में रोशनी की चमक पैदा हो सकती है जो स्वतंत्र-पत्रकारिता के सहारे जीवन-यापन करने का लक्ष्य लिए हु ए हैं । क्रिसमस के पेड़ के हर पत्ते पर झलकती रोशनी की तरह स्वतंत्र-पत्रकारिता का व्यवसाय उसे ऐसे वृक्ष के रूप में दिखाई देता है, जिसकी डाल-डाल पर पारिश्रमिक के 'चैक' लटक रहे हों । लेकिन स्वतंत्र पत्रकारिता की वर्तमान दशा एवं दिशा पर दृष्टि डालें तो गिनती के स्वतंत्र पत्रकारों को छोड़कर भारी संख्या में स्वतंत्र पत्रकारों की ।स्थिति संघर्ष से पूर्ण है शोषण से ग्रस्त है ।

6.2.1 आजादी के बाद परिवर्तन

भारत में आजादी के पांच दशक की पत्रकारिता के परिदृश्य में अनेक परिवर्तन हुए हैं । पत्रकारिता के विकास में सूचना तकनॉलोजी ने एक क्रान्तिकारी परिवर्तन पैदा किया 'है तथा पत्रकारिता के विकास को गति प्रदान की है । समाचारपत्रों की संख्या के प्रसाद में वृद्धि के साथ गुणात्मक दृष्टि से भी अनेक परिवर्तन हु ए हैं । देश में शिक्षितों की संख्या में भी निरन्तर वृद्धि अंकित की गई है । इससे पाठकों की संख्या में भी वृद्धि है । हजारों की संख्या में दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक्;, मासिक आदि पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन होने लगा है ।

रेडियो, दूरदर्शन, सरक के सूचना माध्यमों आदि का भी विस्तार हु आ है । आजादी से पूर्व जहां अंग्रेजी एवं हिन्दी के कुछ' ही समाचारपत्रों का वर्चस्व था, वहां आज क्षेत्रीय स्तर के समाचारपत्रों की प्रसार संख्या में आश्चर्यजनक वृद्धि अंकित की गई है । अन्य भारतीय भाषाओं के समाचारपत्रों की संख्या एवं प्रसार संख्या ने भी नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं । ऐसे स्थिति में, लगता है कि स्वतंत्र पत्रकारिता के लिए भी एक विस्तृत एवं व्यापक क्षेत्र की संरचना हु ई है और स्वतंत्रपत्रकारिता के विकास की सम्भावना के भी द्वार खुले है।

स्वतंत्र-पत्रकारिता के विकास की दृष्टि से छोटे, मध्यम और क्षेत्रीय या भारतीय-भाषाओं के समाचारपत्रों की बढ़ती संख्या ..भी एक उत्साहजनक संकेत देती है । देश के समाचारपत्रों एवं समाचार माध्यमों में अधिकांश समाचारपत्र । एवं माध्यमों के अपने नियोजित संवाददाता या रिपोर्टर नहीं है । समाचारपत्र या समाचार-माध्यम अपने कॉलम भरने या अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाचार एजेन्सियों, सरकार की प्रेस-विज्ञप्तियों, देशी-विदेशी फचिर-सिण्डीकेटों आदि की सेवाओं पर निर्भर है । आजादी के पूर्व समाचारपत्रों का अपना अलग एक प्रकार का, व्यक्तित्व था और पत्रकारिता एक प्रकार की मिशन-भावना लिए हु ए थी । परन्तु आजादी के बाद समाचार माध्यमों का रुझान व्यावसायिकता की ओर अधिक बढ़ गया है । अनेक बड़े समाचारपत्रों पर पूँजीपतियों या उद्योगपतियों का स्वामित्व है और अब संपादकीय-पकड़ कमजोर होने लगी है।

'मार्केटिंग' या व्यावसायिकता के कारण समाचारपत्रों का स्वरूप बदलने लगा है । उन पर व्यावसायिकता का रंग गहरा होने लगा है । इस व्यवस्था में समाचारपत्रों का अपना व्यक्तित्व खोने लगा है । एक प्रकार की आकृति- विहीनता से समाचार. -माध्यम ग्रस्त है । उनका कोई साफ चेहरा नहीं उभर पाता क्योंकि अधिकांश समाचारपत्र स्वतंत्र -पत्रकारिता से हटकर सिंडीकेटों या फीचर संस्थाओं की सस्ती सेवाओं से अपने कॉलम भरने की प्रवृत्ति के शिकार हैं । इससे स्वतंत्र पत्रकारिता को समर्पित पत्रकारों की स्थिति ।पर बुरा प्रभाव पड़ा है । ऐसे समाचारपत्र गिने-चुने ही है जिनके अपने स्टाफ में नियमित कुशल पत्रकार और फीचर लेखक है । ऐसे पत्रों के बड़े नगरों या महानगरों में संवाददाताओं का भी अपना एक जाल है । इसके विपरीत ऐसे समाचारपत्रों की संख्या अधिक है जिनके संवाददाता, स्वतंत्र पत्रकारिता करते हैं और समाचारपत्रों के कॉलम के आधार पर उन्हें पारिश्रमिक का भुगतान प्राप्त होता है ।

6.2.2 कठिनाइयां और संघर्ष बनाम स्वतंत्र पत्रकारिता

6.2.2.1 प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता का अभाव- स्वतंत्र पत्रकारिता का क्षेत्र कठिनाइयों और संघर्षो से भरा हुआ है । ऐसे स्थिति में, स्वतंत्र पत्रकारिता में प्रवेश करने से पूर्व एक पत्रकार को अपनी योग्यता, क्षमता और साहस का निरपेक्ष -भाव से मूल्यांकन कर लेना चाहिए । स्वतंत्र-पत्रकारिता की यह भी शर्त है कि उसमें प्रवेश करने के लिए प्रतिस्पर्धा का सामना करने की भी क्षमता होनी चाहिए । किसी एक विषय में पारंगत होने मात्र से लेखक का काम चल सकता है । लेकिन स्वतंत्र पत्रकार को पत्रकारिता से संबंधित सभी बातों की जानकारी के अतिरिक्त पत्रकारिता के कर्म को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने की कुशलता भी होनी चाहिए । स्वतंत्र पत्रकारिता को मात्र एक शौक के रूप में अपनाना अलग बात है और इसे जीवन-यापन का आधार बनाकर पूर्णकालीन पत्रकारिता को समर्पित हो जाना अलग बात है ।

फ्रीलासिंग का मार्ग कोई सहज मार्ग नहीं है । इसमें धैर्य और कठिन परिश्रम की आवश्यकता पड़ती है । पल-पल निराशा का सामना करने की क्षमता की आवश्यकता पड़ती है । पल-पल निराशा का सामना करने की क्षमता भी जरूरी है । एक स्वतंत्र पत्रकार को वो सारी सुविधाएं जो किसी समाचार माध्यम में सेवारत पत्रकार को उपलब्ध हो सकती है, स्वयं ही जुटानी पड़ती है । पतन- पाठन सामग्री, स्टेशनरी, टाइप की व्यवस्था, डाक खर्च, मकान किराया, स्वास्थ्य संबंधी आवश्यकताएं, घर के सारे खर्चों को पूरा करने आदि की व्यवस्था करने के लिए सदैव उसे पारिश्रमिक पर निर्भर रहना पड़ता है, जो आलेख या समाचारों के प्रकाशित होने के बाद कभी मिल सकता है । इस प्रकार स्वतंत्र पत्रकारिता का दायरा एक आर्थिक अनिश्चित्ता का दायरा है ।

6.2.2.2 अनिश्चय और शोषण की स्थितियां - यह सच है कि स्वतंत्र पत्रकारिता के क्षेत्र में कार्य करने वाले पत्रकार किसी संस्थान के सेवा-नियमों से मुक्त एक स्वच्छन्द पक्षी के समान, सम्मानपूर्वक खुली हवा में सांस लेने की स्थिति में होता है । वह अपनी इच्छानुसार जीने और अपनी पसन्द के अनुरूप विषयों का चयन करने, समाचारपत्रों, पत्रिकाओं एवं माध्यमों को चुनने और उनके लिए लिखने या न लिखने के लिए पूर्ण स्वतत्र होता है । किसी समाचारपत्र के अध-पढ़े या कम पढ़े-लिखे मालिक के संकेतों के अनुसार या उसकी इच्छा के अनुसार कार्य करने की त्रासदी से बच जाता है । लेकिन स्वतंत्र पत्रकारिता की आर्थिक शोषण और अनिश्चय से भरी पगडंडी पर चलने का मार्ग कांटों

से भरा हुआ है । इस रास्ते को चुनने से पहले हर कदम पर निराशा और कुंठा की ।स्थितियों का सामना करने का मानस बना लेना चाहिए अन्यथा निराशा और कुंठा के कारण बीच राह में पगडंडी बदलने को विवश होना पड़ सकता है ।

6.2.2.3 अल्प और अनिश्चित पारिश्रमिक

अंग्रेजी या हिन्दी के बड़े समाचारपत्रों एवं समाचार माध्यमों द्वारा विशेष और स्थापित किसी विषय में और विशेषज्ञता प्राप्त स्वतंत्र पत्रकारों को दिए जाने वाले आकर्षक पारिश्रमिक को, संपूर्ण स्वतंत्र पत्रकारिता के सन्दर्भ में अपवादों के रूप में लिया जाना चाहिए क्योंकि कुल मिलाकर स्वतंत्र पत्रकारिता की स्थिति भारत में अत्यन्त दयनीय है । समाचारपत्रों या पत्रिकाओं के पारिश्रमिक दिए जाने के प्रसंग में भी विषमताएं और अनिश्चय की स्थिति है । हर समाचारपत्र या पत्रिका की पारिश्रमिक देने की अलग-अलग दरें हैं । पारिश्रमिक दिए जाने का आधार, गुणात्मकता या स्वतंत्र पत्रकार की योग्यता अनुभव, तत्परता, क्षमता आदि नहीं माना जाता, बल्कि एक समाचारपत्र में कितना स्थान या कॉलम एक समाचार को मिलता है, उसकी लंबाई-चौड़ाई अर्थात् प्रति कॉलम सेण्टीमीटर का माप होता है । इस सन्दर्भ में कोटा स्थित इंडियन एक्सप्रेस में लंबे समय तक नियोजित एवं नियमित रूप से संपादकीय विभाग में काम करने के बाद वर्षों से स्वतंत्र पत्रकारिता को समर्पित रहकर कार्य करने का लंबा अनुभव रखने वाले वरिष्ठ और स्वतंत्र पत्रकार बी. एम. बांठिया से हुई बातचीत में ज्ञात हुआ कि वे स्वतंत्र पत्रकार के रूप में देश के बड़े अंग्रेजी समाचारपत्र के काफी समय तक अंशकालीन संवाददाता रहे । अंशकालीन संवाददाता के रूप में इन्हें अधिकृत तो किया गया लेकिन यह शर्त भी लगा दी कि 24 घंटे में बिना नोटिस के अंशकालीन संवाददाता को हटाया भी जा सकता है । इसके अतिरिक्त यह फार्म भी भरकर उन्हें देना पड़ा कि 'पत्रकारिता' मेरा व्यवसाय नहीं है बल्कि एक हॉबी के रूप में मैं यह कार्य कर रहा हूँ । ये सब शर्तें कानूनी दांव-पेच का अंग हैं ।

ऐसा समय भी आया जबकि पत्रकारों के लिए गठित वेतन बोर्ड की रिपोर्ट आने वाली थी । समाचारपत्र के मालिकों को शायद ऐसा लगा कि वेतन बोर्ड दारा अंशकालीन संवाददाताओं के लिए अधिक पारिश्रमिक दिए जाने या उन्हें कुछ सुविधाएं प्रदान करने की सिफारिशें वेतन बोर्ड की रिपोर्ट में हो सकती है । अत: स्वतंत्र पत्रकार की अंशकालीन संवाददाता के रूप में यह कहकर उनकी सेवाएं समाप्त कर दी गई कि 'अब आपकी सेवाओं की आवश्यकता नहीं है । ' वेतन बोर्ड की रिपोर्ट में स्वतंत्र पत्रकारों के लिए कोई विशेष रियायत या पारिश्रमिक की वृद्धि की सिफारिशें नहीं आई तो उक्त पत्र ने फिर से अंशकालीन संवाददाता के रूप में काम करने का प्रस्ताव रखा जिसे नामंजूर कर दिया गया । इसके पश्चात् इन्होंने दिल्ली से प्रकाशित एक अन्य बड़े अंग्रेजी अखबार और एक बड़ी समाचार एजेन्सी के लिए काम करना प्रारम्भ किया ।

ऐसे मुक्त पत्रकार को पारिश्रमिक के रूप में हर माह समाचारपत्र से 250 रुपए और जो समाचार प्रकाशित होते हैं, उनके लिए पचास पैसे से एक रुपया प्रति कॉलम सेण्टीमीटर के हिसाब से भुगतान कर दिया जाता है । उक्त समाचारपत्र में मुक्त पत्रकार के श्रम से यदि विज्ञापन दिया जाए तो प्रति कॉलम सेण्टीमीटर की दूर एक हजार रुपए से डेढ़ हजार रुपए करीब होती है । लेकिन कठोर परिश्रम या उससे भी नीची श्रेणी में रखे गए ' स्ट्रींगर' को एक रूपए प्रति सेण्टीमीटर के माप से पारिश्रमिक दिया जाता है । ऐसी परिस्थिति में, स्वतंत्र पत्रकारिता करते रहने की आवश्यकता क्यों पड़ती है? जैसे

प्रश्न के उत्तर में उक्त पत्रकार का मत है - 'यदि आर्थिक दृष्टि से देखें तो किसी भी आत्म सम्मान रखने वाले व्यक्ति को स्वतंत्र पत्रकारिता के क्षेत्र में काम नहीं करना चाहिए क्योंकि समाचारपत्रों द्वारा जो पारिश्रमिक दिया जाता है, वह बहु त असम्मानजनक है और नाम मात्र का होता है । कोई भी व्यक्ति ऐसे पारिश्रमिक के भरोसे जीवित नहीं रह सकता ।

इस प्रकार स्वतंत्र पत्रकारिता की इन विषय स्थितियों में भी सक्रिय रूप से कार्य करते रहने के पीछे इनका कहना है कि इस कार्य में एक चमक है । समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त होती है और व्यक्ति अपने को विशेष महसूस करता है । वह अपनी विवशता के कारण इस क्षेत्र में काम करता है । अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए इनके आय के अन्य स्रोत हैं ।

6.2.3 स्वतंत्र पत्रकारिता का कष्टप्रद पेशा

इस प्रकार स्वतंत्र पत्रकारिता के क्षेत्र में जो लोग पूर्ण रूप से इसे जीवन यापन का आधार मानकर चलते हैं, वे कष्टों से खेलते हैं । परन्तु जो लोग अपनी आय के लिए कोई न कोई कार्य या व्यवसाय करते रहने के साथ-साथ स्वतंत्र पत्रकारिता को सम्मान और प्रतिष्ठा सूचक रूप में अपनाते हैं, उन्हें कोई विशेष निराशा नहीं मिलती । बडे समाचारपत्रों का जब यह हाल है तो क्षेत्रीय या स्थानीय पत्रों की स्थिति क्या होगी? राजस्थान के एक प्रमुख समाचारपत्र में आलेख या फीचर के लिए 200 रूपए के लगभग और संवाददाताओं को 125 रुपए प्रति कॉलम अर्थात् लगभग 2 रुपए प्रति कॉलम सेण्टीमीटर पारिश्रमिक देने की व्यवस्था है । जबकि एक अन्य समाचारपत्र द्वारा मात्र 50 पैसे प्रति सेंटीमीटर पारिश्रमिक दिया जाता है ।

इसके अतिरिक्त फीचर या अन्य समाचार आधारित आलेख के स्वीकृत हो जाने मात्र से पारिश्रमिक नहीं मिलता । प्रकाशन के दो -तीन माह बाद पारिश्रमिक दिया जाता है । दिल्ली प्रेस प्रकाशन समूह ही एक ऐसा समूह है जो किसी भी रचना की स्वीकृति के बाद अग्रिम रसीद लेकर रचना के प्रकाशन से पूर्व पारिश्रमिक दे देता है ।

स्वतंत्र लेखन के क्षेत्र में अधिकांश लेखक समाचारपत्रों एवं पत्रिकाओं को फीचर, आलेख आदि बिना उनके द्वारा मांग किए ही भेजते है । इस प्रकार स्वतंत्र रूप से भेजी गई रचनाएं खेद सहित लौटा दी जाती हैं । यदि टिकट लगा लिफाफा साथ में न हो तो रद्दी की टोकरी में फैंक दी जाती हैं. । इस स्थिति से बचने का एक ही मार्ग है कि समसामायिक घटनाओं के संदर्भ में पत्र-पत्रिकाओं की आवश्यकता को समझकर यदि रचनाएं भेजी जाएं तो उनके छपने की संभावना अधिक होती है । समाचारपत्रों एवं पत्रिकाओं से संपर्क करने और उनकी आवश्यकता को समझकर आलेख प्रस्तुत करने से अधिक सफलता मिल सकती है । विशेष प्रकार की संगोष्ठियों, विशेष अवसरों आदि के सन्दर्भ में सामयिक एवं ठोस आलेखों के भी प्रकाशन की गुंजाइश अधिक होती है । इसके अलावा किसी विषय विशेष में शोध एवं चिन्तन के द्वारा विशेषज्ञता प्राप्त करके एक विषय पर पूर्ण अधिकार के साथ लिखने की प्रतिष्ठा अर्जित करने से भी स्वतंत्र पत्रकारिता में पांव जमने की आशा की जा सकती है ।

समाचारपत्र और पत्रिकाओं के अतिरिक्त इलाक्ट्राय माध्यमों में भी समय-समय पर विशेष विषयों पर सामग्री की जरूरत पड़ती है । ऐसे माध्यमों में भी सम्पर्क रखा जाना चाहिए । आलेख या समाचार परक फीचर के साथ छायाचित्रों के प्रकाशन का चलन भी बढ़ा है । अत: मुक्त लेखन के साथ

छाया चित्रण को भी जोड़ दिया जाए तो ऐसे में प्रकाशन के अधिक अवसर मिल सकते हैं और आय में भी वृद्धि की जा सकती है ।

बोध प्रश्न-1

1. मुक्त लेखन का अर्थ क्या है?
2. मुक्त पत्रकारिता का स्वरूप स्पष्ट कीजिए ।
3. मुक्त पत्रकारों की कठिनाइयों एवं संघर्ष का उल्लेख कीजिए ।
4. स्वतंत्र पत्रकारिता को कष्टप्रद पेशा क्यों कहा है?

6.3 स्वतंत्र पत्रकारिता की समस्याएं

स्वतंत्र पत्रकार को निम्नलिखित समस्याओं का सामना करना पड़ता है

1. क्षमता का पुरस्कार नहीं
2. पहचान का संकट
3. राष्ट्रीय चिन्ता का अभाव

6.3.1 क्षमता का पुरस्कार नहीं

समस्त कठिनाइयों एवं विषम परिस्थितियों के बावजूद नियमित रूप से कठोर परिश्रम किया जाए और नियमित लेखन किया जाए तो स्वतंत्र पत्रकारिता के क्षेत्र में पांव टिकाने की सम्भावनाएं पैदा की जा सकती हैं । यदि विभिन्न माध्यमों में अपनी योग्यता एवं क्षमता की प्रतिष्ठा कायम कर दें तो ऐसे में स्वतंत्र पत्रकार का रास्ता सरल हो सकता है । समय पर किसी पत्र या पत्रिका द्वारा सौंपे काम को ठीक तरह और पूरी क्षमता के साथ संपन्न कर देने पर भी सफलता का मार्ग प्रशस्त होता है । साफ टाइप किए गए या स्पष्ट रूप से लिखे गए एवं ठीक ढंग से संपादित किए गए आलेखों के प्रकाशन की भी सम्भावनाएं बढ़ती हैं।

यह सच है कि दृढ़ संकल्प और ठोस इरादों के सहारे अनेक लोग कांटों भरे या अंधेरों की जकड़ में गुम रास्तों पर भी कदम रखते हैं और चुनौतियों का सामना करते हुए सफलता की सीढ़ियां पार कर लेते हैं । लेकिन आम आदमी ऐसे एक विवशता की जिन्दगी ढोने के अलावा कुछ नहीं कर पाता । समाज में मान-सम्मान पाने के बावजूद अपनी आर्थिक अवस्था को देखकर उसकी हालत उस मोर की तरह हो जाती है जो अपने पांवों की ओर देखता है तो पीड़ा से मन भर जाता है।

6.3.2 पहचान का संकट

'फ्रीलासिंग के कष्ट' शीर्षक लेख में अवधेश कुमार ने स्वतंत्र पत्रकारिता की दुर्दशा का उल्लेख करते हुए लिखा है - मेरा उद्देश्य मात्र इस दु :खद ऐतिहासिक सच्चाई को उद्‌घाटित करना है कि हिन्दी एवं भाषाई पत्रकारिता की परम्परा में किसी संस्थान से संबद्ध पत्रकारों से इतर स्वतंत्र पत्रकारों के अस्तित्व की सामूहिक रूप से कल्पना ही नहीं की गई । यदि की गई होती तो फ्रीलांस पत्रकार कम से कम अस्पृश्यता के घातक दंश झेलने को विवश नहीं होते । पश्चिम देशों में हालात इसके विपरीत है । कई देशों में स्वतंत्र पत्रकारों की समानान्तर सत्ताए काफी सशक्त है । निश्चित रूप से इसके कारण ऐतिहासिक है, पर दुर्भाग्य की बात यह है कि एक लंबे काल खंड को पार करने के बावजूद फ़ीलांसरों के सन्दर्भ में अनदेखेपन का वह सामूहिक भाव अपने पूरे अमानवीय रूप में आज भी जीवित हैं । थोड़े

शब्दों में कहे तो एक फ्रीलांसर पुराकथाओं में वर्णित असंख्य शापित जीवों की तरह ही अस्वाभाविक विपत्तियों से जूझते -जूझते अपना अन्त कर देने को अभिशप्त है ।

चूंकि हमारे यहां फ्रीलांस पत्रकारिता को व्यवसाय रूप में कोई सांस्थानिक स्वरूप प्राप्त हुआ ही नहीं, इस कारण फ़ीलासर के सामने सबसे पहले तो अपनी पहचान का ही संकट खड़ा रहता है । किसी संस्थान में कार्य करने के बाद पत्रकारिता के क्षेत्र में अपने आलेखों के आधार पर प्रवेश करने वालों के समक्ष पहचान का इतना बड़ा संकट नहीं है जितना उन पत्रकारों के समक्ष है जिन्होंने पत्रकारिता को एक पेशे के रूप में अपनाने का निर्णय लिया । फ्रीलांस पत्रकारों के बारे में अनेक भ्रान्त धारणाएं भी पाली जाती हैं । उनकी योग्यता और क्षमता के साथ उनकी पत्रकारिता के क्षेत्र में आने की मंशा पर भी सवाल खड़े किए जाते हैं ।

6.3.3 राष्ट्रीय चिन्ता का अभाव

राष्ट्रीय स्तर पर भी स्वतंत्र पत्रकारिता के लिए कोई सोच या स्पष्ट धारणा नहीं बन पाई है । विभिन्न माध्यमों में स्वतंत्र पत्रकारिता के लिए बहुत कम गुंजाइश रहती है । संपादकीय स्तर पर भी स्वतंत्र पत्रकारों को उपेक्षा का शिकार होना पड़ता है । पूरे सामाजिक माहौल पर दृष्टि डाले तो ज्ञात होगा कि स्वतंत्र पत्रकारों की अपने पत्रकारिता के पेशे में ही उपेक्षा नहीं है बल्कि सामाजिक एवं राजनीतिक स्तर पर भी उन्हें कोई मान्यता प्राप्त नहीं हैं । किसी समाचारपत्र या माध्यम से जुड़े पत्रकारों के अलावा स्वतंत्र पत्रकारिता के क्षेत्र में कार्यरत एक बहुत बड़े पत्रकार समुदाय की कल्पना तक सामाजिक स्तर पर विकसित नहीं हुई है ।

देश के नीति-निर्धारकों तक को यह पता नहीं है कि संस्थानों से इतर भी पत्रकारों का कोई समुदाय हो सकता है । इसलिए सारी नीतिगत व्यवस्थाएं एवं सुविधाएं संस्थानों में कार्यरत पत्रकारों के लिए ही होती है । स्वतंत्र पत्रकारों को केन्द्र एवं राज्य स्तरों पर मान्यता दिए जाने का प्रावधान तो है लेकिन उनकी कोई सत्ता नहीं मानी जाती । अत: सत्ता के स्तर पर उन्हें इस संदर्भ में कोई महत्व नहीं दिया जाता ।

6.4 स्वतंत्र-पत्रकारों के लिए सुविधाओं की मांग

स्वतंत्र पत्रकारों की निम्नलिखित सुविधाएं अपेक्षित है -

1. वेतन संबंधी सुविधा
2. वातावरण-निर्माण
3. सम्मानयुक्त कार्य कुशलता

6.4.1 वेतन संबंधी सुविधा

यद्यपि हाल ही में पत्रकारों के एक संगठन ने स्वतंत्र पत्रकारों की स्थितियों का विवेचन करके अपने एक सम्मेलन में उन्हें स्थायी संवाददाताओं के वेतन का आधा वेतन दिए जाने एवं अन्य सुविधाएं प्रदान करने की मांग उठाई है । यह अच्छा निर्णय है । संगठित स्वर और सम्मिलित प्रयासों से ऐसा सार्थक परिणाम मिल सकता है जो मुक्त पत्रकारों को वैतनिक स्तर पर सम्मान दिला 'सके । मांग करना और मांग का पुरस्कार प्राप्त कर लेना दो भिन्न बातें हैं । लेकिन ईमानदार और प्रतिबद्ध स्वतंत्र पत्रकार के लिए कठिनाइयों से निजात पाने की मंजिल अभी कहीं दूर-दूर तक दृष्टिगोचर नहीं होती।

ऐसे में यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि आखिर स्वतंत्र पत्रकार पलायन का मार्ग अपनाए या डटकर । स्थितियों को बदलने की तैयारी करे? इस संदर्भ में अपने पत्रकारिता के लंबे अनुभवों के आधार पर पत्रकार अवधेश कुमार का मत है - ' मैं अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर कह सकता हूँ कि यदि आप में स्वाभिमान और आत्मबल है, पत्रकारिता के मूल्यों के प्रति आपकी निष्ठा हो, घटनाओं को देखने की अपनी दृष्टि हो, तो आप अपने परिश्रम और लगन से इन समस्त प्रतिकूलताओं के बीच भी अपना स्थान बना सकते हैं । हां , इतना निश्चित है कि बगैर भागीरथ प्रयत्न के फ्रीलासिंग के लिए अनुकूल कार्य -संस्कृति विकसित नहीं हो सकती ।

6.4.2 वातावरण निर्माण

स्वतंत्र पत्रकारिता की समस्याओं के समाधान खोजने एवं उपयुक्त वातावरण का निर्माण करने के लिए स्थायी एवं अस्थायी संवाददाताओं, स्वतंत्र पत्रकारों को आपस में मिलकर समस्याओं के विश्लेषण, विचार-विमर्श एवं चिन्तन की प्रक्रिया शुरू करके एक उपयुक्त वातावरण बनाने की पहल करनी होगी । शीर्ष पत्रकारों, पत्रकार संगठनों एवं नीति निर्धारकों के साथ बराबर विचार-विमर्श एवं संगोष्ठायों के माध्यम से स्थितियों का खुलासा किया जाना चाहिए, ताकि संस्थानगत पत्रकारों, समाज एवं सरकार के स्तर पर वैचारिक एवं नीतिगत बदलाव का मार्ग प्रशस्त हो सके और पत्रकारिता के प्रति समर्पित देश के लागों की योग्यता, अनुभव एवं उर्जा का पत्रकारिता एवं समाज को सबल बनाने की दिशा में उपयोग हो सके तथा स्वतंत्र-पत्रकारिता को उसका उचित स्थान मिल सके ।

6.4.3 सम्मानयुक्त कार्यकुशलता

स्थापित पत्रकारिता, समाज एवं सरकार के संदर्भ में अपनी प्रतिष्ठा और अपने कार्य को सम्मानजनक स्थितियों में पहुँचाने के लिए शर्त यह भी है कि फ़लिंसर भी अपनी कार्य कुशलता को निरन्तर उन्नत एवं श्रेष्ठ बनाने का प्रयास करे तथा समाज और देश के प्रति अपने दायित्व को प्रमुखता दे । समसामयिक पत्रकारिता एवं सामाजिक व्यवस्था के विकास एवं पोषण में स्वतंत्र पत्रकारिता की अहम भूमिका है लेकिन सोच के स्तर पर इसका चिन्तन, मनन और महत्व स्वीकार किए जाने की यात्रा में अभी पहला कदम भी उठाना शेष है । दुनिया के अन्य देशों में स्वतंत्र पत्रकारिता की दशा और दिशा का अध्ययन करके भारतीय परिप्रेक्ष्य में भी स्वतंत्र पत्रकारिता को एक अर्थपूर्ण एवं प्रभावपूर्ण दिशा की ओर मोड़ना चाहिए ।

बोध प्रश्न - 2

1. स्वतंत्र या मुक्त पत्रकारिता की समस्याएं बताइए?
2. स्वतंत्र पत्रकारों के लिए किन सुविधाओं की अपेक्षा की गई है?
3. क्या सुविधाओं की मांग अपेक्षित है या मुक्त पत्रकारों से भी कोई अपेक्षा हो सकती है ।

6.5 स्वतंत्र पत्रकारों की दयनीय दशा

असंगठित और पारिश्रमिक पर कार्य करने वाले आम लोगों एवं श्रमिकों की दशा भारत में दयनीय है । यहा एक अति अलाभकारी व्यवसाय है । अमेरिका, फ्रांस, इंग्लैंड आदि देशों में भारत से बेहतर स्थितियां हैं लेकिन वहां के परिप्रेक्ष्य में स्वतंत्र पत्रकारों को यहां कई त्रासदियां इसलिए झेलनी

पड़ती है कि समय की मांग और बढ़ती महंगाई को ध्यान में रखते हुए पारिश्रमिक में समयसमय पर संशोधन नहीं किया जाता है । भारत में यह प्रवृति और भी भयावह है । वर्षो तक वहीं पुराना पारिश्रमिक मिलता है जबकि रूपए का अवमूल्यन और महंगाई की दृष्टि से पारिश्रमिक की राशि दैनिक वेतनभोगी श्रमिक से भी कम पड़ती है ।

कुछ साल पूर्व अमेरिका के प्रकाशित एक पत्रिका ने वर्ष के सर्वश्रेष्ठ आलेख के लिए ' एलीफेण्ट पुरस्कार' के नाम से पुरस्कार देना प्रारम्भ किया ताकि स्वतंत्र पत्रकारों का उत्साह बढाया जा सके । यह पत्रिका अमेरिका के समाचारपत्रों एवं पत्रिकाओं की तुलना में स्वतंत्र पत्रकारों को अधिक परिश्रमिक देती थी । अमरीका जैसे सम्पन्न देश में भी वहा की स्थितियों के संदर्भ में स्वतंत्र पत्रकारिता को जीवन यापन का आधार बनाना कठिन कार्य रहा है । इस स्थिति के बावजूद, स्वतंत्र पत्रकारों की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई है और जो काम अभी भारत में शुरू होना शेष है उसका प्रारम्भ वहां कोई दो दशक पहले ही शुरू हो गया ।

वाशिंगटन में स्वतंत्र पत्रकारों ने वाशिंगटन इडिपेंडेण्ट राईटरर्स (डब्ल्यू. आई. डबल्यू) की स्थापना की । इस संस्था ने एक मासिक बुलेटिन निकाला जो इसके 800 सदस्यों को भेजा जाता था । उक्त बुलेटिन में समाचारपत्रों, पत्रिकाओं एवं विविध माध्यमों में स्वतंत्र पत्रकारों के लिए संभावनाओं, विभिन्न माध्यमों द्वारा दिए जाने वलि पारिश्रमिक आदि की जानकारी दिए जाने के अतिरिक्त स्वतंत्र पत्रकारों के मुखर या कड़वे उन अनुभवों से संबंधित आलेख भी दिए जाने लगे, जो उन्हें विभिन्न माध्यमों के साथ स्वतंत्र पत्रकार के रूप में काम करने की अवधि में होते थे । इसके अतिरिक्त पत्रकारों की इस संस्था द्वारा संपादकों, विभिन्न माध्यमों से जुड़े लोगों के साथ संगोष्ठयां एवं विचार-विमर्श का सिलसिला भी शुरू किया गया । भारत में संपूर्ण स्वतंत्र पत्रकार समुदाय बिखरा हुआ है और अपनी अपनी त्रासदियों को नियति मानकर भोगने को विवश है । अन्य देशों की तरह यदि कोई संगठित प्रक्रिया प्रारम्भ की जाए तो भविष्य में स्वतंत्र-पत्रकारिता को एक नई दिशा देना संभव है ।

6.6 सारांश

मुक्त पत्रकारिता का अपना अस्तित्व और क्षेत्र है । भारत में यद्यपि अभी तक इस क्षेत्र में कोई सुखद स्थिति देखने में नहीं आई है । वेतनभोगी पत्रकार या संवाददाता से भिन्न मुक्त रूप में कार्यरत रहने वाले पत्रकारों एवं लेखकों को निरन्तर शोषण का शिकार होना पड़ता है । उनकी रचनाएं सपारिश्रमिक प्रकाशित होती भी हैं तो भुगतान अल्पराशि का होता है तथा वह भी समय पर उपलब्ध होना कठिन होता है । यह कहना अनुचित नहीं है कि मुक्त पत्रकारों के लिए संगठन होना चाहिए और संगठित रूप में उन्हें सम्मानजनक पारिश्रमिक तथा पत्र- पत्रिकाओं से नियमित मुक्त पत्रकारों' को एक निश्चित वेतन एवं परश्रमिक दर पर भुगतान किया जाना चाहिए ।

मुक्त पत्रकारों का संगठन अपनी असुविधाओं को दूर करने की मांग कर सकता है । लेकिन उसके लिए संगठित स्वर और नेतृत्व की आवश्यकता है

6.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. आरमूर्ति .के . : फ्रीलासिंग, रिलाइन्स पब्लिशिंग हाऊस, 3026/ VII रंजीत नगर, नई दिल्ली110008 -
2. रंजीत लाल : मेकिंग आफ वे फ्रीलांस जर्नलिस्ट विदुर पत्रिका :

3. अवधेशकुमार : फ्रीलासिंग के कष्ट, विदुर- पत्रिका .

6.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. फ्रीलांस किसे कहते हैं? फ्रीलांस करने वाले पत्रकारों के समक्ष आने वाली कठिनाइयों का उल्लेख कीजिए ।
2. मुक्त पत्रकारिता का भारत में भविष्य' शीर्षक पर अपने विचार प्रकट कीजिए ।
3. 'फ्रीलांसर पुराकथाओं में वर्णित असंख्य शापित जीवों की तरह ही अस्वाभाविक विपत्तियों से जूझते -जूझते अपना अंत कर देने को अभिशप्त है । ' इस कथन की समीक्षा कीजिए ।
4. संक्षिप्त टिप्पटणयों लिखिए : -

   अ. स्वतंत्र पत्रकारों की दयनीय दशा

   ब. स्वतंत्र पत्रकारिता कष्टप्रद पेशा

   स आजादी के बाद स्वतंत्र पत्रकारिता

इकाई 7 उद्योगों के लिए लेखन -

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.1.1 देश के विकास का त्रयात्मक संबंध

7.1.2 राष्ट्रीय विकास का आधार : उद्योग

7.2 उद्योग : अर्थ एवं परिभाषा

7.2.1 उद्योग का अर्थ

7.2.2 उद्योग की परिभाषा

7.2.3 उद्योग बनाम औद्योगीककिरण

7.3 औद्योगिक विकास का स्वरूप एवं वर्गीकरण

7.3.1 औद्योगिक विकास का प्रादुर्भाव

7.3.2 औद्योगिक विकास का स्वरूप

7.3.3 उद्योगों का वर्गीकरण

7.3.3.1 ग्रामोद्योग

7.3.3.2 लघु उद्योग

7.3.3.2.1 पारम्परिक बनाम लघु उद्योग

7.3.3.3 मध्यम उद्योग

7.3.3.4 बड़े उद्योग

7.4 औद्योगिक नीति और लघु उद्योग

7.5 भारत में उद्योग का इतिहास

7.5.1 दयनीय औद्योगिक अवस्था और स्वतंत्र भारत

7.5.2 स्वातंत्रयोत्तर काल में औद्योगीकरण की प्रगति

7.6 भारत का औद्योगिक पिछड़ापन और राष्ट्रीय नीति

7.6.1 औद्योगिक पिधड़ेपन के कारण

7.6.2 औद्योगिक विकास के लिए सुझाव

7.6.3 उदारीकरण की नीति

7.7 सारांश

7.8 पारिभाषिक शब्दावली

7.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.10 निबंधात्मक प्रश्न

7.0 उद्देश्य

जनसंचार हेतु लेखन की पिछली इकाइयों में आप बहुत कुछ नया जान चुके हैं और यह भी कि इसके लिए आप और हमारे बीच के लोग ही निरन्तर और नियमित लिख रहे हैं । इसी क्रम में यहां हम उद्योगों के लेखन के विषय में जान पाएगे ।

इस इकाई में आप उद्योगों के लिए लेखन के विषय में पढ़ेंगे और जान सकेंगे कि

- उद्योग क्या है तथा उसके विकास की स्थिति क्या है?
- उद्योग के विविध प्रकार क्या होते हैं?
- उद्योग क्रांति के क्षेत्र कौन से रहे हैं तथा उस क्रांति का परिणाम क्या रहा है?
- औद्योगीकरण क्या है और उसके विकास का स्वरूप क्या रहा है?
- औद्योगीकरण की आवश्यकता और जन सामान्य पर उसका प्रभाव क्या है?
- औद्योगीकरण में पिछड़ापन क्या और क्यों होता है?

7.1 प्रस्तावना

7.1.1 देश के विकास का त्र्यात्मक संबंध

राष्ट्र के विकास के क्षेत्र में त्र्यात्मक संबंध होता है - राजनीति, अर्थ व्यवस्था एवं उद्योग । किसी राष्ट्र की सफल राजनीति या शासनतंत्र की सफलता का मूल उसकी अर्थ व्यवस्था कही जाती है और यदि राजनीतिक परिवर्तन होता है तो अर्थ व्यवस्था भी प्रभावित होती है । कभी-कभी प्राकृतिक प्रकोप से भी राष्ट्र की अर्शनीति प्रभावित होती है । राष्ट्र आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक दृष्टि से कितना विकसित है तो उसका मापदण्ड ।निश्चित ही औद्योगिक विकास से ग्रहण किया जाता है।

विकासशील तृतीय विश्व में भारत के विकास का मूल्यांकन भी जहां त्र्यात्मक स्तर पर देखा जाए तो निश्चित ही राजनीति से अधिक उसकी आर्थिक व्यवस्था की सुदृढ़ता के लिए देश के औद्योगिक विकास पर भी ध्यान केन्द्रित करना होगा ।

7.1.2 राष्ट्रीय विकास का आधार उद्योग

वर्तमान समय में किसी भी राष्ट्र के संबंध में जानने का प्रयास उसकी भौगोलिक स्थिति के विस्तार और फैलाव से नहीं समझा जा सकता, न जल एवं प्राकृत स्रोतों की उपलब्धता से और न श्रेष्ठ राजतंत्र व्यवस्था से क्योंकि ये सब तो अनुषंगी पक्ष सिद्ध होते हैं । प्रमुख रूप से राष्ट्र के विकास का आधार उद्योग है । किसी भी राष्ट्र के उद्योग जिस तीव्रता के विकास करते हैं, उसका तीव्रता से उसका आर्थिक विकास होता है और अर्थव्यवस्था सुदृढ़ होने पर उसी शासनतंत्र भी स्थायित्व पाता है । इस दृष्टि से तृतीय विश्व के अनेक राष्ट्र अभी पूर्णत: औद्योगिक विकास के स्तर पर अपनी पहचान बनाने के लिए यत्नशील है ।

7.2 उद्योग - अर्थ एवं परिभाषा

7.2.1 उद्योग का अर्थ

उद्योग शब्द का निर्माण दो शब्दों के योग से होता है । योग में 'उत् ' उपसर्ग लगाकर उद्योग बनता है । 'उत् ' या उद् का अर्थोउत्कर्ष है । ऐसा योग जो उत्कर्ष मय हो । यह जीवनयापन का ऐसा योग है जिससे व्यक्ति ऊपर चढ़ता है या विकास करता है । सार्वजनिक स्तर पर सभी को ऊपर चढ़ने या उत्कर्ष करने के लिए उद्यम का आश्रय लेकर व्यापारिक स्तर पर काम करना होता है । यही काम यंत्रों, विविध प्रकार की तकनीकों और अनेक लोगों के श्रम का रूप लेता है तब उसका परिणाम उद्योग होता है ।

7.2.2 उद्योग की परिभाषा

सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री हॉने के अनुसार- 'उत्पादन में जोखिम उठाने वाला साधन या उपादान उद्यम होता है । " प्रो. नाइट के विचार में - ' उद्यमी वह व्यक्ति है जो दो कार्य करता है- व्यापार का जोखिम उठाना तथा उस पर नियंत्रण रखना।

श्रीमती जॉन राबिन्सन ने उद्योग को इस प्रकार परिभाषित किया है - 'एक अविभक्त वस्तु को उत्पादित करने वाली फर्म का एक दल । '

टेमण्ड बॉय के अनुसार- 'उद्योग' शब्द प्राय: शिथिलता या अस्पष्टता से निम्नलिखित साहसिक कार्यो के दल को सम्मिलित करने के प्रयोग के लिए किया जाता है -

1. वे जो उत्पाद तैयार करते है या घनिष्ठ रूप से संबंधित दल या संयुक्त उत्पाद या,
2. वे जो सामान्य कच्चा माल प्रयोग करते हैं या,
3. वे जो एक समान प्रक्रिया या उत्पादन में लगे हुए हैं ।

डावर की उद्योग की अवधारणा स्पष्ट और व्यापक है कि ' वह वाणिज्य की शाखा जो धन के उत्पादन से संबंधित है और जो कृषि, मत्स्य पालन, वनीकरण और निर्माण आदि को साम्मिलित किए हो ।

जे. एम. कीन्स ने परिभाषा की है - ' वह व्यापार जिसमें सामयिक उत्पाद वितरण और विनिमय और उत्पादन के उपादानों के विभिन्न कार्यो के लिए जो वे उत्पादन के प्रारम्भ से लेकर उपभोक्ता की अंतिम संतुष्टि तक यथाक्रम प्रक्रिया पूरी की जाती है ' ।

लेकिन ए. बीचमैन द्वारा की गई परिभाषा उपयुक्त सभी परिभाषाओं से भिन्न है । वे कहते हैं - 'प्रत्येक दिन के अभिप्राय में, फर्मो (व्यावसयिक प्रतिष्ठानों) का वर्ग जो एक-समान वस्तुओं का उत्पादन करता है या एक सामान्य कच्चे माल पर कार्यरत है । सिद्धान्त रूप में इस बात पर विचार किया जाता है कि यह फर्मो का समूह है, जो अभिन्न वस्तुओं का उत्पादन करता है । '

भारत के औद्योगिक वित्त निगम अधिनियम के आधार पर ' कोई पब्लिक लिमिटिड कम्पनी या सहकारी समिति, जो एक विधान द्वारा बनाई गई हो और भारत में पंजीकृत हो, निर्माण में लगी हो, या खनन में या होटल उद्योग या विद्युत उत्पादन में या दूसरे प्रकार के ऊर्जा के उत्पादन में लगी हो, को औद्योगिक व्यवसाय कहेंगे । '

7.2.3 उद्योग बनाम औद्योगीकरण

उद्योग शब्द जहां 'उत् ' उपसर्ग लगाकर योग प्रक्रिया पूरी करके उद्योग में बदलता है तथा संयम, साधना एवं परिणाम प्रतीक्षा करने के व्यवहार को अच्छे परिणाम में बदलता है जो उद्योग से बना और ' करण' प्रत्यय के प्रयोग से निर्मित शब्द औद्योगीकरण एक विशिष्ट अर्थ देता है । अत: औद्योगीकरण का अर्थ होता है कि किसी वस्तु या सेवा जो उद्योगों की श्रृंखला में एक प्रक्रिया बन जाती है । इस प्रक्रिया या औद्योगीकरण की आवश्यकता एवं विकास को रेखांकित करते हुए पाश्चात्य विद्वान बोरे एवं बी. एस. येमे ने कहा है कि - ' औद्योगीकरण व्यापक रूप में आर्थिक एवं उच्च जीवन स्तर की कुंजी माना जाता है । ' इसी संदर्भ में ब्राइस ने कहा है कि- ' विकास के किसी भी सुदृढ कार्यक्रम में औद्योगिक विकास को अनिवार्यत: एवं अन्तत: एक महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है । '

भारत के प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि - ' सभी राष्ट्र जिस देवता की पूजा करते हैं वह देवता है औद्योगीकरण, वह देवता है मशीन, वह देवता है उच्च उत्पादन तथा प्राकृतिक शक्ति एवं साधनों का अधिकाधिक लाभप्रद उपयोग । '

उपयुक्त विवेचना एवं विद्वानों के कथन यह स्पष्ट कर देते हैं कि 'औद्योगीकरण एक देश के लिए आवश्यक आहार है । अत: इसको अवश्य ही अपनाया जाना चाहिए' ।

7.3 औद्योगिक विकास का स्वरूप एवं वर्गीकरण

7.3.1 औद्योगिक व्यवस्था का प्रादुर्भाव

मानव विकास के साथ ही हुआ है । यद्यपि अपनी आदिम अवस्था के' मानव ने जब पत्थर युग में प्रवेश किया था, तब अपने भोजन-यापन के लिए उसने पत्थर से शिकार आरम्भ किया था, फिर कृषि उद्यम अपनाया था । यह मानव श्रम पर आधारित रहता था, अत: उद्योग का वह व्यापक रूप धारण नहीं कर सका था लेकिन आधुनिक काल तक आते - आते इसका स्वरूप एवं विकास ऐसा हुआ है, कि उसे औद्योगिक क्रांति के रूप में जाना जाता है तथा मानव ने नवीन अर्थव्यवस्था में जीने का अनुभव किया है ।

इस नवीन अर्थव्यवस्था का जन्म अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में इंग्लैण्ड में होने वाली औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप हुआ । औद्योगिक क्रांति के कारण जहाँ एक नवीन युग का सूत्रपात हुआ, वहां पर एक नवीन आर्थिक जीवन-पद्धति एक प्रमुख विशेषता बन गई । परिणामस्वरूप परम्परागत सामाजिक व्यवस्था एवं उसके बंधन शिथिल होने लगे और औद्योगिक सभ्यता पर आधारित सामाजिक व्यवस्था एवं संस्कृति की स्थापना हुई । उत्पादन क्षमता में विपुल वृद्धि हुई और अर्थव्यवस्थाएं तीव्र गति से प्रगति की ओर अग्रसर हुई ।

नवीन औद्योगिक प्रणाली की जिस " गंगा' का उद्गम इंग्लैण्ड में हुआ, वह जर्मनी, जापान, अमेरिका आदि विकासशील राष्ट्र के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है । भारत में भी इस औद्योगिक अभिरचना से प्रभावित हुए बिना ना रह सका ।

7.3.2 औद्योगिक विकास का स्वरूप

आज जबकि औद्योगीकरण के बारे में मतैक्य हो चुका है । औद्योगिक विकास के ढांचे के बारे में अभी भी वाद-विवाद चल रहा है, परन्तु निर्विवाद रूप से औद्योगिक विकास तीन अवस्थाओं में हुआ है- प्रथम अवस्था का संबंध प्राथमिक वस्तुओं से माल तैयार करना है । इसमें अनाज को पीसना, निकालना, दाल दलना चम्मड़ा रंगना, सूत कातना, टिम्बर तैयार करना और धातु अयस्क पिघलाना शामिल किए जाते हैं । द्वितीय अवस्था में कच्चे माल के रूप परिवर्तन संबंधी अर्थात् बेकरी, भोजन मिहान बनाना, जूते बनाना, धातु संबंधी वस्तुएं, वस्त्र, फर्नीचर और कागज तैयार करना । तृतीय अवस्था में, जन मशीनों तथा पूंजी यंत्रों का निर्माण होता है जो प्रत्यक्ष रूप में किन्हीं फोरी आवश्यकताओं की तुष्टि नहीं करती, बल्कि भावी उत्पादन क्रिया को सुविधाजनक बनाती है । ' हाफमैन के अनुसार, 'औद्योगीकरण की प्रथम अवस्था में उपभोक्ता वस्तु विषयक उद्योगों का सर्व प्रमुख महत्व होता है और उसका शुद्ध उत्पादन पूंजीगत उद्योगों के उत्पादन से पांच गुना होता है । द्वितीय अवस्था में यह अनुपात 2.5 प्रतिशत हो जाता है और तृतीय अवस्था में यह केवल 1.5 प्रतिशत हो जाता हैं

7.3.3 उद्योगों का वर्गीकरण

औद्योगिक क्रांति और आद्यौगीकरण को अर्थव्यवस्था का अंग मान लिया गया है । यद्यपि आज औद्योगीकरण के विषय में मतैक्य है तथा औद्योगिक संस्थाओं के सीमांकन के विषय में जो प्रमुख कसौटियां अपनाई जाती हैं, उनमें से प्रमुख है : -

(क) विनियुक्त पूंजी की मात्रा

(ख) नियुक्त श्रमिकों की संख्या

(ग) (न) संगठन और प्रबंध का स्वरूप

(घ) वार्षिक उत्पादन का मूल्य

उक्त चार कसौटियों के आधार पर उद्योगों के विविध वर्ग किए जाते हैं क्योंकि प्रत्येक उद्योग के निमित्त कच्चे माल की उपलब्धता और उसके परिवहन की सुविधा के उपरांत उस उद्योग में विनियुक्त पूंजी की सीमा, श्रमिक संख्या, प्रबन्धकीय स्वरूप और उसका संगठन के साथ-साथ उसके उत्पादन का मूल्य भी देखना होता है । कोई भी प्रबन्धन या संगठन तब तक किसी उद्योग में अपनी सहभागिता नहीं करता, जब तब उसको विश्वास नहीं हो जाता है कि जो पूंजी विनियोजन वह करेगा उसका लाभ पूंजी और उत्पाद के रूप में उसे प्राप्त हो सकेगा ।

अत: उद्योगों का वर्गीकरण निम्नलिखित रूप में किया जा सकता है -

(1) ग्रामोद्योग (2) लघु उद्योग

(3) मध्यम उद्योग (4) बड़े उद्योग

7.3.3.1 ग्रामोद्योग

ग्राम उद्योग की परिधि में वे सभी उद्योग धन्धे आते हैं जो ग्रामवासी अपने घरों के आस-पास पारम्परिक रीतियों अथवा जाति विशेष के कौशल का उपयोग करते हुए निष्पादित करते हैं । इन धन्धों में मुख्यतया स्थानीय स्तर पर उपलब्ध कच्चे माल, कौशल और पूँजी की ही आवश्यकता होती है ।

सामान्यतया ग्राम उद्योग को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है : -

1. कुटीर उद्योग

वे उद्योग जो ग्रामीण एवं अर्द्ध शहरी क्षेत्रों में कृषि के साथ-साथ अथवा अंशकालिक धन्धे के रूप में अपनाएं जाते हैं ।

2. कृषि आधारित उद्योग

ये उद्योग कृषि के काम आने वाले साज-समान के उत्पादन अथवा कृषि उत्पादों के संसाधनों से संबद्ध होते हैं । इस संदर्भ में वे सभी उद्योग जो डेयरी, मत्स्यपालन, मुर्गीपालन, रेशम, खादी उत्पादन, सूअर, भेड़, बकरी पालन एवं मधुमक्खी पालन आदि से संबंधित है, इस श्रेणी में आते हैं । कृषि पर आधारित उद्योग कुटीर. लघु अथवा बड़े उद्योगों में से किसी भी श्रेणी में लगाए जा सके हैं ।

भारतवर्ष में कुटीर एवं लघु उद्योगों का प्रारम्भ से ही विशिष्ट स्थान रहा है । आज भी ये उद्योग रोजी-रोटी के दृष्टिकोण से कृषि के बाद ही स्थान प्राप्त किए हुए हैं । इतने वर्षो के विकास के बावजूद भारत को औद्योगिक दृष्टिकोण से कुटीर व लघु उद्योगों को देश कहा जाना चाहिए न कि वृहद उद्योगों का देश । आज भी भारत में बड़ी संख्या में लोग कुटीर उद्योग एवं लघु उद्योगों में लगे हुए हैं ।

7.3.3.2 लघु उद्योग

औद्योगिक ढांचे के आकार के अनुरूप लघु उद्योग का स्वरूप ऐसा होता है जिसमें कम पूंजी एवं यंत्र व्यवस्था या उपकरणों से उत्पादन किया जाता हो तथा उसमें एक सीमित संख्या तक श्रमिक लगाए जाते हों । स्थानीय स्तर पर लघु उद्योग ग्रामीण आवश्यकताओं की पूर्ति के हेतु स्थापित होते हैं । कृषक जीवन की अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ग्रामीण स्तर पर लुहारी, आटा चक्की, कृषि उत्पाद, जूट या सनई के कट्टे (बोरे) बनाने के लिए लघु उद्योग स्थानीय स्तर पर एवं आवश्यकता के अनुरूप विकास पाते हैं । सन् 1975 से पूर्व लघु उद्यम के लिए 7. 5 लाख रुपए के कुल पूंजी विनियोग को कसौटी माना गया । 1975 में भारत सरकार द्वारा स्वीकृत परिभाषा के अनुसार 10 लाख रूपए तक पूंजी वाले औद्योगिक उद्यम को लघु उद्यम कहा जाता था । इस परिभाषा के अनुसार मध्यम उद्यमों से लघु उद्यमों को भिन्न करने वाली कसौटी यह थी कि लघु उद्योगों में कुल 10 लाख रुपए कम की अचल पूंजी लगायी गई हो । अनुषंगी उद्यमों में यदि पूंजी विनियोग 15 लाख रुपए से कम होगा तो वे लघु उद्यम माने गए ।

7.3.3.2.1 पारम्परिक बनाम आधुनिक लघु उद्योग

आमतौर पर लघु उद्योगों को दो वर्गों में विभक्त किया जाता है -

(1) पारम्परिक लघु उद्योग

(2) आधुनिक लघु उद्योग

पारम्परिक लघु उद्योग में खादी और हथकरघे ग्राम उद्योग, हस्तशिल्प. रेशम उद्योग, नारियल जटा उद्योग शामिल किए जाते हैं । आधुनिक लघु उद्यमों द्वारा विभिन्न प्रकार की वस्तुएं बनायी जाती हैं, जिसमें साधारण वस्तुओं से लेकर परिमार्जित वस्तुएं टी.वी .सेट, इलैक्ट्रोनिक नियंत्रण उपकरण, विभिन्न इंजीनियरिंग वस्तुएं शामिल हैं, जो बड़े उद्यमों की सहायक है । पारम्परिक लघु

उद्यम अत्यधिक श्रम प्रधान है, जबकि आधुनिक लघु स्तर की इकाइयां बहुत ही परिमार्जित मशीनरी और उपकरणों का प्रयोग करती है। पारम्परिक ग्रामोद्योग पूर्णकालिक रोजगार नहीं उपलब्ध करा सकते, परन्तु केवल अंशकालीन या सहायक रोजगार उपलब्ध करा सकते हैं । इसके अतिरिक्त पारम्परिक ग्राम तथा लघु उद्योग ऐसे श्रमिकों एवं दस्तकारों द्वारा चलाए जाते हैं जो निर्धनता की रेखा के नीचे है, जबकि आधुनिक लघु उद्योग आजीविका का अच्छा स्रोत है । अत: यदि रोजगार के विस्तार के साथ निर्धनता की रेखा के नीचे जनसंख्या कम करनी है तो आधुनिक लघु उद्योग क्षेत्र का अधिक तेजी से और व्यापक स्तर पर विकास करना होगा ।

7.3.3.3 मध्यम उद्योग

अपनी स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप स्थानीय स्तर पर लघु उद्योग स्थापित होते हैं, ठीक उसके विपरीत स्थानीय आधार पर क्षेत्रीय आवश्यकताओं एवं कच्चे माल की खपत की सुविधा के आधार पर उपलब्ध श्रम की सुविधा के अवसर पर मध्यम आकार के उद्योग स्थापित होते हैं जिनमें खाद्यान्न, उर्वरक, लोह धातुपरक, कृषि यंत्रादि की अधिकता रहती है । बर्फ कारखाने, सम्भरण हेतु कोल्ड स्टोरेज आदि की स्थापना क्षेत्रीय आधार पर मध्यम आकारीय लघु उद्योग का रूप लेकर ही होती है ।

7.3.3.4 बड़े उद्योग

बड़े उद्योगों की स्थापना का उद्देश्य भी बड़ा होता है, उसके लिए मात्र क्षेत्रीय आवश्यकता शर्त की आवश्यकताओं पर ध्यान केन्द्रित नहीं किया जाता, अपितु वैसी ही आवश्यकताओं की मांग के विभिन्न स्थान, कच्चा माल, श्रम सुविधा, आवागमन के साधनों की सुविधा आदि का भी ध्यान रखा जाता है और अधिक से अधिक माल के उत्पादन एवं उसके वितरण का विचार पूंजी विनियोजन की सुविधा को केन्द्र में रखकर किया जाता है । बड़े उद्योगों के लिए देश के अन्य स्थानों से या विदेश से आवश्यक बड़े-बडे संयंत्र भी आयातित करने पड़ते हैं । इनमें कुछ यंत्रों पर मानव श्रम की अपेक्षा होती है तो कुछ स्वचालित यंत्र व्यवस्था के अंतर्गत मात्र दो-तीन श्रमिकों के संचालन एवं निरीक्षण कार्य करते हैं। बड़े उद्योग अपने प्रांत से आगे बढ़कर दूसरे प्रान्तों और देशों में व्यापक रूप से अपनी साख बढाते हैं । रेडियो, टेलीविजन, रासायनिक खाद, भारी धातुकीय संयंत्र, विविध प्रकार के यंत्रों के कारखाने, विद्युत उपकरण आदि इस वर्ग के ही उद्योग कहे जाते हैं ।

भारत में बड़े पैमाने के छः उद्योग हैं । वे हैं लोह तथा इस्पात उद्योग, सूती वस्त्र उद्योग, पटसन उद्योग, चीनी उद्योग, सीमेन्ट उद्योग तथा कागज उद्योग। इस्पात उद्योग को हमारे आर्थिक नियोजन में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त होता रहा है। तेजी से औद्योगीकरण कर रहे किसी भी विकासशील देश के लिए इस्पात क्षमता का तेजी से विकास करना आवश्यक है। संगठित सूती पकड़ा उद्योग हमारे प्रमुख उद्योगों में सबरने पुराना और सुदृढ़ रूप में स्थापित उद्योग है। पटसन भारत का एक महत्वपूर्ण उद्योग है। विदेशी मुद्रा अर्जित करने की क्षमता ही इसके महत्व का कारण है। जहाँ तक चीनी उत्पादन में भारत के स्थान का प्रश्न है भारत चीनी उत्पादकों में विश्व का चौथा मुख्य उत्पादक देश है। पहले तीन क्रमानुसार है रूस, ब्राजील और क्यूबा । संगठित उद्योगों में चीनी उद्योग का महत्वपूर्ण स्थान है । भारत विश्व का सातवां सबसे बड़ा सीमेंट उत्पादक देश है किन्तु भारत का प्रति व्यक्ति सीमेंट

का उपयोग विश्व में सबसे कम है । असम और पश्चिम बंगाल को छोड़कर देश के सभी भागों में सीमेंट उद्योग भली-भांति फैला हुआ है । भारत में आज भी कागज उद्योग में जो उत्पादन होता है वह हमारी आवश्यकता से लगभग 14% कम पड़ता है । आयतित कागज में अधिकांश पैकिंग का कागज विशेषतया क्रापट कागज था । आज देश में निर्मित कागज में अधिकांश छपाई का कागज है ।

7.4 औद्योगिक नीति और लघु उद्योग

सन् 1980 में कांग्रेस द्वारा घोषित औद्योगिक नीति में लघु उद्योगों की परिभाषा में सुधार किया गया । अब इस परिभाषा के अन्तर्गत-

1. पिद्दी क्षेत्र में विनियोग की सीमा 1 लाख रुपए से बढ़ाकर 2 लाख रुपए कर दी गई है,
2. लघु स्तर की इकाइयों में विनियोग की सीमा 10 लाख रुपए से बढ़ाकर 20 लाख रुपए कर दी गई है, तथा
3. अनुषंगी इकाइयों के लिए विनियोग की सीमा 15 लाख रुपए से बढ़ाकर 25 लाख रुपए कर दी गई ई ।

मार्च, 1985 में सरकार ने लघु स्तरीय उद्यमों की विनियोग सीमा 20 लाख रुपए से बढ़ाकर 45 लाख रुपए और सहायक उद्यमों की 5 लाख रुपए से बढ़ाकर 45 लाख रुपए कर दी ।

औद्योगिक नीति 1995 के अनुसार प्लाण्ट और मशीनरी के लिए उद्यमों में विनियोग की अधिकतम सीमा बढ़ाकर 60 लाख रुपए कर दी गयी और तदनुरूप अनुषंगी इकाइयों के लिए 75 लाख रुपए कर दी गयी । पिद्दी इकाइयों के लिए विनियोग की सीमा 2 लाख रुपए से बढ़ाकर 5 लाख रुपए कर दी गयी ।

बोध प्रश्न -1

1. उद्योग की क्या परिभाषाएं है? संक्षेप में स्पष्ट कीजिए ।
2. औद्योगिक विकास की अवस्थाएं कितनी है? इनमें किस अवस्था में शुद्ध उत्पादन पूंजीगत उद्योगों के उत्पादन से पांच गुना होता है?
3. वृहद उद्योगों पर सक्षिप्त टिप्पणी दें ।
4. ग्राम उद्योग, कुटीर उद्योग व कृषि पर आधारित उद्योग क्या है? अन्तर स्पष्ट कीजिए ।
5. लघु उद्योगों से आप क्या समझते हैं?
6. लघु उद्योगों की परिभाषा में क्या सुधार किया गया है?
7. पारम्परिक बनाम आधुनिक लघु उद्योग के प्रमुख लक्षण क्या है? स्पष्ट करें?

7.5 भारत में उद्योग का इतिहास

7.5.1 दयनीय औद्योगिक अवस्था और स्वतंत्र भारत

दीर्घकालीन दासता और ब्रिटिश शासकों की द्वेषपूर्ण नीतियों एवं स्वेच्छाचारी तथा स्वार्थी व्यवहार ने भारत की अर्थव्यवस्था को निष्क्रिय बना दिया था । हमारे प्राकृतिक व मानवीय संसाधनों का तेजी से दोहन उन्होंने अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए न कि भारतीयों के कल्याण के लिए किया । अत: देश में स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भीषण समस्याएं मुंह बाएं खड़ी थीं । सन् 1950 में जब भारत

में औद्योगिक विकास की संकल्पना की गयी तो औद्योगिक विकास के स्वरूप ने एक विलक्षण दृश्य प्रस्तुत किया । देश में उस समय प्रमुख रूप से रूई, टैक्सटाइल्स, गन्ना, सीमेंट, कोयला, खनन, लोहा एवं इस्पात उद्योग थे । देश का औद्योगिक आधार संकीर्ण था और उसे एक छोटी चीज से लेकर इंजन तक आयात करना पड़ता था । इसका कारण ब्रिटिश सरकार की निरपेक्ष प्रबंध नीति थी । सन 1947 में जब राष्ट्रीय सरकार ने अंग्रेजों से सत्ता ग्रहण की तो उसके सामने बहुत बड़ा काम यह था कि देश के विभाजन के कारण जो उद्योग बहुत खराब अवस्था में विद्यमान थे, उनका पुनर्निर्माण करें और योजनाबद्ध ढंग से राज्य दारा संचालित औद्योगीकरण शुरू करे । अर्थव्यवस्था के आधार पर पूर्व में स्थापित उद्योगों को बहुविध और बहु आयामी बनाने में जो सफलता मिली है उसे विविध पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान या समग्र रूप में स्वातंत्र्योत्तर काल में हुई औद्योगिक संवृद्धि की दृष्टि से देखना उपयुक्त होगा ।

7.5.2 स्वातंत्र्योत्तर काल में औद्योगीकरण की प्रगति

सन् 1951 के पश्चात से अब तक के लगभग 47 वर्षों के नियोजन में औद्योगीकरण की प्रगति भारतीय आर्थिक विकास का मुख्य लक्षण रही है । पहले दौर के औद्योगिक नोतियों के अधीन बहुत से उद्योगों में भारी विनियोग करके नई क्षमता का निर्माण किया गया । इसके कारण इस दौरान औद्योगिक उत्पादन बढ़कर लगभग 5 गुना हो गया और इस प्रकार भारत विश्व का दसवां बड़ा औद्योगिक देश बन गया । कहना न होगा कि भारत में औद्योगीकरण की प्रक्रिया से परिवर्तनों की श्रृंखला का जन्म हुआ । इन परिवर्तनों को औद्योगीकरण का प्रभाव कहा गया । यह प्रभाव तीन प्रकार का है -

पहला - आन्तरिक संरचनात्मक प्रभाव

दूसरा - सामाजिक प्रभाव

तीसरा - विदेशी व्यापार पर प्रभाव

पहले प्रभाव के अंतर्गत कृषि में कार्य करने वाली जनसंख्या में कमी आने लगी है तथा मजदूरों की संख्या में वृद्धि होने लगी है । श्रम कल्याण और सामाजिक सुरक्षा योजनाएं लागू हुई है । शाहरीकरण को बढ़ावा मिला है । क्षेत्रीय असंतुलन बढ़ा है । प्रत्यक्ष करों में वृद्धि हुई है । सार्वजनिक सेवाओं में अधिक वृद्धि नहीं हो सकी है । औद्योगीकरण के दूसरे. प्रभाव के अंतर्गत सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया तेज हुई है । ग्रामीण आत्मनिर्भरता में कमी आई है । परिवारों का विघटन बढ़ा है । कुटीर उद्योगों पर बुरा प्रभाव पड़ा है । मृत्यु दर में कमी आई है और जन्म दरें प्राय: वहीं बनी रह गई है, इससे जनसंख्या तेजी से बढ़ने लगी है ।

औद्योगीकरण का तीसरा प्रभाव है विदेशी व्यापार पर पड़ा । देश में औद्योगीकरण होने से विदेशी व्यापार के आकार, प्रकृति और दिशा में परिवर्तन आया है ।

7.6 भारत का औद्योगिक पिछड़ापन और राष्ट्रीय नीति

7.6.1 औद्योगिक पिछड़ेपन के कारण

भारत के औद्योगिक पिछड़ेपन के कुछ प्रमुख कारण देखे जाएं । ये प्रमुख कारण हैं : -

1. दीर्घकाल तक विदेशी शासन एवं राष्ट्रीय संसाधनों का विदेशियों दारा दोहन एवं शोषण किया जाते रहना है । यही नन्ही, ब्रिटिश शासन द्वारा विभेदात्मक संरक्षण नीति अपनाकर भारत के उद्योगों को क्षति पहुँचाई थी ।
2. आधुनिक औद्योगीकरण में भारी मात्रा में पूंजी की आवश्यक्ता का निरन्तर अभाव रहा है ।
3. प्रतिकूल सामाजिक वातावरण की निरन्तरता ने औद्योगिक विकास को आगे नहीं बढ़ने दिया है।
4. शक्ति-साधनों का अभाव भी इस दिशा में अपनी विशेष भूमिका दिखाता है क्योंकि उच्च कोटि के कोयले और पेट्रोलियम पदार्थो का बाहर से आयात करना पड़ता है ।
5. आधुनिक यंत्रों और निपुण तकनीकी विशेषज्ञों का अभाव आज तक भी पूरा नहीं किया जा सका।
6. योग्य एवं साहसी उद्यमियों के अभाव के कारण भी पिछड़ेपन रहा है ।
7. देशव्यापी परिवहन एवं संचार माध्यमों का अभाव भी पिछड़ेपन का अभाव है ।

7.6.2 औद्योगिक विकास के लिए सुझाव

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि देश में औद्योगीकरण के मार्ग में अनेक बाधाएं हैं । औद्योगिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए निम्न सुझाव दिए जाते हैं -

1. भारत में औद्योगिक क्षेत्र के विकास के लिए सार्वजनिक क्षेत्र में उद्योगों की स्थापना की जानी चाहिए । यह कार्य नीति पहले से ही है किन्तु ऐसे उद्योगों की कार्य कुशलता बहुत ही निम्नस्तर की हैं । अत: उसमें सुधार लाने की आवश्यकता है ।
2. सरकार को निजी क्षेत्र को पर्याप्त सुविधाएं देकर बढ़ावा देना चाहिए ।
3. विदेशी पूंजी को निश्चित अनुकूल शर्तों पर देश में प्रोत्साहित किया जाए ।
4. पूंजी निर्माण में प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से कुछ करों में छूट दी जा सकती है ।
5. पर्याप्त शक्ति साधनों का विस्तार कर नवीन शक्ति इकाइयों की स्थापना की जानी चाहिए ।
6. उपाय के रूप में आधुनिक मशीनों के आयात की अनुमति और यथेष्ट सुविधाएं दी जा सकती हैं
7. औद्योगिक विकास के लिए प्राकृतिक साधनों का विदोहन किया जाए ।
8. कृषि उद्योग को विद्युत, पानी, उर्वरक, शुद्ध उन्नत बीज, कीट व्याधिनाशक आदि पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराये जाने चाहिये ताकि कृषि उद्योग विकसित हो सके और कृषि से अधिकांश उद्योगों को कच्चा माल प्राप्त होने लगे ।

7.6.3 उदारीकरण की नीति

कहना न होगा कि जुलाई, 1991 के उदारीकरण और वैश्वीकरण की कार्यनीति से औद्योगीकरण की गति में कुछ तेजी आई है । कुछ उद्योगों को छोड़कर शेष सभी उद्योगों में लाइसेन्स प्रणाली समाप्त कर दी गयी है । सार्वजनिक उद्योगों की कार्य कुशलता बढ़ाने के प्रयास किया जा रहे हैं । विदेशी पूंजी को बढ़ावा दिया जा रहा है । उद्योगों को अपने शक्ति-साधन स्थापित करने की अनुमति दी जा रही है । इन सभी उपायों से औद्योगीकरण को बढ़ावा मिलने की सम्भावनाएं है और औद्योगिक पिछड़ापन दूर करने के निरन्तर स्वप्न बनते जा रहे हैं ।

बोध प्रश्न - 2

1. औद्योगीकरण का संक्षिप्त इतिहास लिखे ।

2. स्वातंत्रोत्तर काल में औद्योगीकरण की उपलब्धियाँ की विवेचना करें
3. भारत के औद्योगिक पिछड़ेपन के कारण बताए और उन्हें दूर करने के उपाय सुझाएं 1

7.7 सारांश

इस इकाई में आप जान बुके हैं कि देश के विकास का त्र्यात्मक संबंध- राजनीति अर्थव्यवस्था एवं उद्योगों पर निर्भर होता है। उद्योग के बिना कोई भी देश अपनी सुदृढ़ अर्थव्यवस्था स्थापित नहीं कर सकता है और जब अर्थव्यवस्था ही अस्थिर होगी तो राजनीतिक अस्थिरता अथवा सत्ता की अस्थिरता देश में सक्रिय होगी। अत: राष्ट्रीय विकास में उद्योग महत्वपूर्ण भूमिका रखते हैं अनेक अर्थ शास्त्रियों द्वारा दी गई उद्योग विषयक परिभाषाओं का अध्ययन भी आप कर चुके हैं

औद्योगिक विकास की एक प्रक्रिया है तथा देश में हो रहे औद्योगीकरम के अंतर्गत उद्योगों के चारभेद किये जाते हैं। ग्रामोद्योग लह उद्योग मध्य उद्योग और बड़े उद्योग। इनके लिए भारत देख ने औद्योगिकी राष्ट्रीय नीति अपनाई है ताकि उन्हें आर्थिक सहयोग किया जाकर प्रोत्साहन दिया जा सके।

7.8 पारिभाषिक शब्दावली

इस इकाई में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दावली है -

औद्योगिक नौति - इसका आशय सरकार के उस चिंतन से है जिसके अंतर्गत औद्योगिक विकास का स्वरूप निश्चित किया जाता है तथा जिसको प्राप्त करने के लिए नियम व सिद्धान्तों को लागू किया जाता है।

उद्योग - इसका अर्थ विज्ञान एवं तकनीकी की सहायता से नवीन उपयोगिताओं या मूल्यों का निर्धारण है।

औद्योगीकरण - जब उद्योगों की श्रृंखला व्यापक रूप करण कर लेती है तो यह एक ऐसी प्रक्रिया बन जाती है जिसे औद्योगीकरण कहते हैं।

एकाधिकार तथा प्रतिबंधित व्यापार कानून - जिससे वृहद उद्योग समूहों के विस्तार तथा नवीन उद्योग की स्थापना को नियमित किया जाता है।

निर्यात प्रोत्साहन - सरकार निर्यात वस्तुओं का उत्पादन करने वाले उद्योगों को विभिन्न प्रकार की सुविधाएं प्रदान करती है।

परिपक्वता की अवस्था - इसमें देश आत्मनिर्भरता पर पहुँच जाता है तथा सभी वस्तुएं देश में ही बनने लगती है।

7.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. आठवीं पंचवर्षीय योजना प्रतिवेदन (1992-97)
2. भारत सरकार : आर्थिक समीक्षा 1997-98
3. इनसाइक्लोपीडिया डिक्शनरी ऑफ इकोनोमिक्स, खंड 3
4. डा चतुर्भुज .मामोरिया एवं : भारतीय अर्थशास्त्र, साहित्य भवन, आगरा डा .एस . सीजैन .
5. रूददत्त एवं के पीसुन्दरम् . : भारतीय अर्थव्यवस्था, एस चाँद एण्ड .कम्पनी लि . रामनगर, नई दिल्ली110055 -

6. जगदीश नारायण मिश्र : भारतीय अर्थशास्त्र, किताब महल, इलाहाबाद
7. Murray , D.Dryce : Industrial Development
8. Kang , Chag Pei : Agriculture and Industrialisation
9. Baver, P.T & Yame . B.S. : The Economics of Undercdevelped Countries
10. Rostow , W.W. : The Problem of Economic Growth

7.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. उद्योग की परिभाषा दीजिए । उद्योग के प्रमुख वर्गों एवं लक्षण देते हुए स्पष्ट कीजिए ।
2. बड़े पैमाने के महत्वपूर्ण उद्योगों की ।विवेचना कीजिए ।
3. लघु उद्योग की परिभाषा में उत्तरोत्तर किए गए सुधारों पर टिप्पणी लिखें ।
4. औद्योगिक दृष्टि से भारत क्यों पिछड़ा हुआ है - कारणों सहित व्याख्या कीजिए ।
5. भारत में औद्योककरण के लिए सुझाव दीजिए ।
6. 'भारत में उद्योग : दशा और दिशा' विषय पर एक आलोचनात्मक लेख लिखिए ।

इकाई 8 कृषि के लिए लेखन

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.1.1 कृषि एक उद्योग

8.1.2 कृषि पत्रिका से अपेक्षाएं

8.1.3 कृषि विषयक ज्ञान एवं प्रक्रिया की निरूतरता

8.1.4 कृषक हितों की प्रहरी

8.2 कृषि पत्रिका के लिए लेखन

8.2.1 आवश्यक सावधानियां

8.2.1.1 आवश्यक जानकारी

8.2.1.2 व्यक्ति उल्लेख से रोचक लेखन

8.2.2 लेखन कला

8.2.2.1 समाचार

8.2.2.1.1 लेखन प्रक्रिया

8.2.2.1.2 उर्ध्व त्रिकोणात्मक लेखन

8.2.2.1.3 असरदार शब्द : छोटे वाक्य

8.2.2.2 लेख

8.2.2.2.1 कैसे लिखे लेख

8.2.2.2.2 रूपरेखा

8.2.2.2.3 शीर्षक

8.2.3 भेंटवार्ता

8.2.3.1 भेंट की योजना

8.2.3.2 प्रश्नावली निर्माण

8.2.4 कृषि प्रश्नोत्तरी

8.3 कृषि पत्रिका का संपादन

8.3.1 पाण्डुलिपि संपादन का दायित्व

8.3.2 उपयोगिता की कसौटी

8.3.3 तस्वीर का प्रदर्शन

8.3.4 प्रूफ रीडिंग

8.4 निबन्धात्मक प्रश्न

8.5 परिशिष्ट

8.0 उद्देश्य

विविध क्षेत्रों के लिए लेखन किस रूप में कैसे किया जाता है - यह आप पूर्वपाठों में पढ़ चुके हैं । आप में से कुछ जिज्ञासु अध्ययनकर्त्ताओं ने उन पाठों से दिए गए निर्देशों के अनुसार अभ्यास भी आरम्भ किया होगा । इस इकाई में कृषि क्षेत्र में लेखन के संबंध में आपको बताया जा रहा है ।

इस पाठ को पढ़ने के उपरान्त आप जान सकेंगे कि

- कृषिकर्म स्वयं में उद्योग हैं ।
- कृषि विषयकज्ञान के विस्तार की आवश्यकता क्यों होती है ।
- कृषि विषयक ज्ञान कैसे प्राप्त किया जा सकता हे ।
- कृषि पत्रिका का अर्थ क्या है तथा उससे क्या अपेक्षाएं है
- कृषि विषयक लेखन रोचक कैसे हो?
- कृषि विषयक लेखन कला का रूप क्या है?
- कृषि पत्रिका और उसकी पांडुलिपि संपादन के लिए क्या दक्षता होनी चाहिए, और
- कृषि पत्रिका की क्या उपयोगिता हो सकती है ।

8.1 प्रस्तावना

8.1.1 कृषि : एक उद्योग

आज कृषि केवल जीवन-यापन का माध्यम नहीं रह गया, बल्कि उद्योग बन गया है जो किसी अन्य उद्योग की तरह किसानों को या तो मालामाल कर सकता है या घाटा दिला सकता है । कृषि कालिजों व कृषि अनुसंधान संस्थानों के लगातार प्रयासों के फलस्वरूप कृषि क्रियाओं और कृषि यंत्रों में भारी बदलाव आया है । जिसके कारण उपज दुगुनी और तिगुनी तक बढ़ी है । जिन खेतों में केवल एक फसल होती थी अब उनमें दो और तीन फसलें लेना संभव हो गया है । यह भी सर्वविदित है कि किसानों को पुरानी लीक से हटाकर नई लीक पर चलाना आसान काम नहीं । उनकी समस्याओं को बारीकी से समझने और उनका कदम-कदम पर मार्गदर्शन करते रहने की जरूरत है । यह दुरूह कार्य कृषि पत्रिका ही कर सकती है जिसका पूरा ध्यान कृषि पर केन्द्रित होता है । अखिल भारतीय ग्रामीण समाचारपत्र संघ ने भी ऐसे पत्र-पत्रिकाओं को ही मान्यता दी थी जिनका कम से कम 60 प्रतिशत कलेवर कृषि और उससे संबंधित विषयों से भरा हो ।

8.1.2 कृषि पत्रिका से अपेक्षाएं

कृषि पत्रिका से पाठकों को अनेक आशाएं या अपेक्षाएं होती हैं । सर्वप्रथम, ऐसी पत्रिका कृषि अनुसंधान संस्थानों, सरकारी कृषि विभागों और किसानों के बीच की कड़ी बन जाती है । वह किसानों को अनुसंधानों व विभागीय सूचनाओं की जानकारी देती है और किसानों की कृषि समस्याओं की अनुसंधान संस्थानों और विभागीय कर्मियों के सामने रखती है । स्थानीय कृषि समस्याओं का हल निकालने पर ही अनुसंधान संस्थान सही अर्थो में सार्थक और किसानों का विश्वासपात्र बनता है । तब खेती भी लाभकारी उद्योग का रूप ले सकती है ।

मिसाल के तौर पर, अनुसंधान संस्थान ने गेहूं या गन्ने की अमुक किस्म की सिफारिश की जिसे मानकर किसान ने फसल बो दी, पर हाड़ -गोड कर उसे जो उपज मिली वह पुरानी किस्म की उपज से भी कम थी । निरुत्साहित किसान दुबारा उस किस्म को कभी नहीं बोएगा और पुरानी किस्म से खेती करने लगेगा । उस सूरत में न सिर्फ प्रभावित किसान, वरन उसके पड़ोसी भी उसकी असफलता देख कर नए बीज से खेती करने से पीछे हट जाएंगे । इसलिए जल्दी से जल्दी कृषि अनुसंधान संस्थान को पता लगाना होगा कि उस किसान के खेत में नए बीज से उपज में बढ़ोत्तरी क्यों नहीं हुई । उसने कृषि क्रियाओं में क्या कमी छोड़ दी थी जिसके कारण सुधरी किस्म से अधिक उपज नहीं मिली? क्या उसने ठीक समय से पानी नहीं दिया था, क्या गुड़ाई नहीं की थी, मिट्टी नहीं चढ़ाई थी या कीटाणुनाशक दवा नहीं छिड़की थी? देखने में खेती बहुत आसान काम लगता है जिसे अनपढ़ या गैस्समझदार भी कर सकता है, पर दरअसल खेती बहुत सूझबूझ का काम है । थोड़ी असावधानी भी हुई तो भारी घाटा उठाना पड़ सकता है ।

8.1.3 कृषि विषयक ज्ञान एवं प्रक्रिया की निरन्तरता

किसानों को खेती की नई क्रियाओं, नए बीज-खाद या सुधरे यंत्रों की एक बार जानकारी दे देना काफी नहीं, बल्कि बार-बार उन्हें हर पहलू से समझाने की जरूरत है । जिससे नई कृषि क्रियाओं की जानकारी उनके मन में अच्छी तरह बैठ जाए और उन क्रियाओं के प्रति उनमें विश्वास और उत्साह जगे । पुरानी मान्यताओं को किसान तभी छोड़ेगा जब वह पूरी तरह आश्वस्त हो जाएगा, क्योंकि नई पद्धति से की गई खेती में पूरी फसल नष्ट होने का खतरा रहता है । ' हाथ धोकर भोजन करो ' या 'भोजन कर कुल्ला करो', ये स्वास्थ्य संबंधी उपयोगी सिफारिशें है, पर इनसे लाभ या हानि की इतनी संभावना नहीं जितनी कृषि संबंधी सिफारिशों को मानने या न मानने में है । पुरानी क्रियाओं को छोड़कर नई क्रियाओं को अपनाना ऐसा काम नहीं जो तुर्ती -फुर्ती में सम्पन्न हो जाए । उसके लिए लगातार कोशिशों की जरूरत है । यह जरूरत अनपढ़ किसान की ही नहीं, हर ऐसे इंसान की है जिसे एक राह छोड़कर दूसरी पर चलने को प्रेरित किया जाता है ।

तीसरे, कृषि पत्रिका किसान- औरतों के कल्याण पर भी जोर दे । वे सिर्फ हल नहीं चलाती हैं, बाकी सब काम करती है । अनाज के भंडार में तो उनकी भारी भूमिका है, इसलिए कृषि पत्रिका उन्हें जागृत करे और नई कृषि क्रियाओं के प्रति उनमें रुचि पैदा करें । चौथे, कृषि पत्रिका ग्रामीण उद्योगों के विकास पर भी ध्यान दें । सिर्फ खेती पर निर्भर रहकर समस्त ग्रामवासियों की रोजी- रोटी की समस्या हल नहीं हो पाएंगी । ऐसे उद्योग- धन्धे जिनमें खपने वाला कच्चा माल गाँवों में ही पैदा होता है या मोटर, पम्प व इंजन सुधारने के धंधे आदि शुरू हो जाएं तो ग्रामीण युवा बेरोजगारों को रोजगार मिल जाएगा, ग्रामीण व्यवस्था समृद्ध होगी और कृषि में निखार आएगा ।

8.1.4 कृषि हितों की प्रहरी

देश की 80 फीसदी जनता गांवों में बसती है और कृषि पर आधारित है, इसलिए कृषि पत्रिका को न सिर्फ कृषि विकास में बल्कि समग्र ग्राम विकास में योग देना होगा । कृषि विकास और ग्राम विकास के मुद्दे एक दूसरे से जुड़े हैं । एक के बिना दूसरा संभव नहीं । कृषि पत्रिका अपने क्षेत्र की

प्रहरी बने, जनमानस तैयार करे और उच्च अधिकारियों तक ग्रामवासियों की लड़ाई लड़े । अक्सर छोटे कर्मचारी किसानों का दोहन करते हैं । कृषि पत्रिका का कर्त्तव्य है कि वह ऐसा दोहन न होने दें । यदि बड़े असरदार किसान छोटे या भूमिहीन किसानों को सताते हैं तो उन जुल्मियों के खिलाफ भी अपनी आवाज बुलंद करे ।

कृषि विकास से जुड़े अन्य मुद्दों पर भी नजर रखें । सहकारी ऋण संस्थाएं अपनी जिम्मेदारियां ठीक तरह निभा रही है या नहीं, उनमें हो रहे घोटालों को उखाड़े, उद्योग- धंधों के बारे में नई जानकारी दे जिससे कृषि ग्राम विकास का एकांगी माध्यम न बना रहे । कृषि पत्रिका को ग्रामवासियों से उसी तरह का मान प्राप्त करना होगा जैसा शहरी पत्र-पत्रिकाओं को शहरों में प्राप्त है । यह तभी संभव होगा जब कृषि पत्रिका अपने पाठकों की ठीक मायने में सहायक बनेगी । दुःख की बात है कि हमारे देश में कृषि पत्रिकाएं अभी बहुत कमजोर अवस्था में है । उनकी प्रकाशन संख्या बहुत सीमित है । इसका मुख्य कारण गाँवों में भारी निरक्षरता है । आशा है ज्यों -ज्यों निरक्षरता घटेगी, किसान साक्षर बनेंगे और कृषि भी लाभदायक उद्योग का रूप लेगी, कृषि पत्रिकाओं का भविष्य निश्चित रूप से उज्जवल बनेगा ।

8.2 कृषि पत्रिका के लिए लेखन

8.2.1 आवश्यक सावधानियाँ

कृषि लेखक को सर्वप्रथम यह जान लेना आवश्यक है जिस क्षेत्र में उसकी पत्रिका पढ़ी जाती है उसमें किन फसलों की खेती होती है , वहीं की जमीन कैसी है, कितना पानी मांगती है और उसे किस किस्म की खाद चाहिए आदि । पाठकों से सिर्फ यह कहना ही काफी नहीं होगा कि वे उन्नत खेती करें या अच्छे बीजों, उचित मात्रा में सिंचाई, उर्वरकों व कीटनाशकों का इस्तेमाल करे । इस अपील को छोटी-छोटी अपीलों में बांटना होगा, जैसे अमुक धरती में अमुक फसल के लिए कौन सा बीज चाहिए। (उसका नाम दें और यह भी बताएं क्यों) । सिंचाई में एक-दो दिन की भी देर हो जाती है तो उपज पर बुरा असर पड़ता है । इसलिए कृषि लेख में साफ बताना होगा कि अमुक फसल में कितना पानी और कब देना चाहिए (कौन सी तारीख से कौन सी तारीख तक) यह जानकारी पास के कृषि अनुसंधान संस्थान से मिल सकती है । इसलिए कृषि पत्रिका और स्थानीय कृषि अनुसधान संस्थान के बीच अटूट संबंध बना रहना चाहिए ताकि जो भी जानकारी पत्रिका में छपे वह वैज्ञानिक आधार पर प्रमाणित हो।

उन्नत कृषि की जानकारी का एक बड़ा स्रोत उन्नत किसान भी है । हर क्षेत्र में ऐसे किसान है जो कम लागत से अधिक उपज लेने में सक्षम हैं, जिनके खेतों की उपज अपने पड़ौसियों के खेतों से दुगुनी-तिगुनी है, जो वैज्ञानिक चक्र अपनाकर एक खेत में साल में दो -तीन फसलें उगा लेते हैं । ऐसे किसानों से भेंटवार्ता कर उपयोगी जानकारी ली जानी चाहिए और उसे कृषि पत्रिका के माध्यम से अन्य किसानों को पहुँचाना चाहिए । ध्यान रखें कि जो भी जानकारी दें वह व्यवहारिक हो । कृषि जानकारी को किसानों तक पहुँचाने में दो कलाओं का प्रयोग होता है -

1. लेखन कला,
2. संपादन कला ।

समाचार व लेख कैसे तैयार किए जाए और उनका संपादन कैसे किया जाए, इन दोनों की जानकारी हम अगले प्रष्ठ में देंगे । जो सावधानियां गैर-कृषि पत्रों में छपी खबरों और लेखों के बारे में बरती जाती है, वही कृषि पत्रिका में छपी खबरों और लेखों के बारे में बरती जानी चाहिए । खबर हो या लेख, इस तरह लिखा जाए कि पाठक को उसमें रुचि पैदा हो और उसे पढ़कर उसमें दिए सुझावों पर अमल करने की ललक पैदा हो । इसके लिए पत्रकार को ध्यान रखना आवश्यक है कि -

1. आवश्यक जानकारी
2. व्यक्ति उल्लेख से रोचक लेखन

8.2.1.1 आवश्यक जानकारी - खबर लिखते समय पहले वाक्य में ही पाठक को बता देना होता है कि क्या खबर है, कब और कहाँ की है और क्यों व कैसे हुई । पूरी रामकहानी कहने की जरूरत नहीं, बल्कि उतना ही लिखें जितना पाठक आसानी से हजम कर सके । लेख में जिन कई क्रियाओं व यंत्रों का जिक्र आप कर रहे हैं, क्या उन्हें खरीदने के लिए किसानों के पास वित्तीय साधन है । यदि नहीं, तो आपके सुझावों पर अमल नहीं होगा और आपका लिखा बेकार जाएगा । यह भी निश्चित कर लें कि क्या समय उपयुक्त है । मसलन, बुवाई हो जाने के बाद नए बीजों की चर्चा करना बेमानी होगा । समाचार हो या लेख इस तरह लिखा जाए कि पाठक सजग हो जाए, वह उसे शुरू से आखिर तक पढ़ डाले और उसमें दिए सुझाव अपना लें । लेख विश्वास जमाने के ढंग से लिखे जाएं, न कि बढ़ा-चढ़ाकर।

8.2.1.2 व्यक्ति उल्लेख से रोचक लेखन - लेखों को रोचक बनाने के लिए उनमें व्यक्तियों का उल्लेख भी कर दिया जाए तो उत्तम होगा जिससे पाठक को लगे कि उससे पहले अन्य किसान उस जानकारी का लाभ उठा चुके हैं । यह भी सोच लें कि जो आप लिख रहे हैं क्या उसके बारे में अधिकतर पाठकों में सहमति है । मसलन, कीटनाशकों के बारे में लिखना तभी लाभकारी होगा जब पाठकों का मन बन जाए कि कीटनाशकों का प्रयोग कर वे अपनी फसल बचा सकते हैं । पहले उनमें कीटनाशकों के प्रति आस्था जमानी होगी, उसके बाद उन्हें कीटनाशकों की जानकारी देना ठीक होगा, नई कृषि जानकारी कृषि अनुसंधान संस्थानों और उनके द्वारा लगाए कृषि मेलों में जिनमें हजारों किसान पास और दूर से आते हैं, आसानी से मिल सकती है । उन्नत किसानों के अनुभवों पर आधारित आप अनगिनत समाचार और लेख तैयार कर सकते हैं ।

8.2.2 लेखन कला

8.2.2.1 समाचार - कृषि लेखन के विषय विविध हो सकते हैं । कुछ प्रमुख रूप यहाँ प्रस्तुत हैं -

1. समाचार
2. लेख
3. भेंटवार्ता
4. कृषि प्रश्नोत्तरी

लिखते समय पहले पैरा में ही आपको 'क' (ककार) से शुरू होने वाले पांच सवालों का जवाब देना होगा- क्या, कौन, कहाँ, कब, क्यों और कैसे? मानो किसी किसान के खलिहान मे आग लग गई और काफी नुकसान हो गया । उसकी खबर आपको लिखनी है । मौके पर पहुँच कर किसान के पास बैठकर हमदर्दी दिखाने के बजाय उससे या उसके रिश्तेदारों व पड़ौसियों से पांचों सवालों का जवाब जानिए- क्या हुआ, संबंधित व्यक्ति का नाम, स्थान, समय और कारण । इन पांचों सवालों से मिली जानकारी

को पहले पैरे में दें । उसके बाद अन्य संबंधित बातों को यदि आप समाचार में इन पांचों सवालों में किसी का भी जवाब देने से चूक गए तो आपका समाचार अधूरा माना जाएगा । ये पाँचों सवाल ऐसे हैं जो एकदम पाठक में उत्सुकता पैदा करते हैं । यदि समाचार पाठक की उत्सुकता को शांत नहीं करता तो पाठक निराश हो जाएगा।

इन सवालों को इस तरह समझें : - **क्या-** क्या वारदात हुई? सिर्फ आग लगी या कोई व्यक्ति जख्मी भी हुआ या मरा और कितना नुकसान आँका गया? **कौन-** किसके खलिहान में आग लगी, उसका नाम । उसकी बिरादरी का नाम भी देना चाहे तो दे सकते हैं । कहाँ - किस गांव में और उसके किस मौहल्ले या पट्टी में? **कब-** आग कब लगी या उसकी जानकारी कब हुई? दिन में लगी जब आस-पास लोग थे या रात को जब सब घरों को जा चुके थे ? **क्यों /कैसे -** क्या किसी कमेरे ने अधजली बीड़ी खलिहान में फैंक दी थी या हवा-मिट्टी का झोंका पड़ोस की रसोई या हुक्के की आँच से चिंगारी उड़ा लाया था? अगर इस बारे में दो राय हैं तो दोनों रायों को देना ठीक होगा ।

8.2.2.1.1 लेखन प्रक्रिया - पहले पैरा में उक्त सवालों से मिलने वाली जानकारी देकर आप बाद के पैराग्राफों में यह भी दे सकते हैं कि क्या यह इस मौसम की पहली आग थी, क्या इस किसान के खलिहान में पहले भी आग लगी थी, क्या आग बुझाने वालों की मदद मिली, आग बुझाने के लिए पानी कहाँ से मिला, आग की खबर मिलने के कितनी देर बाद आग बुझाने का काम शुरू हुआ?

समाचार का सबसे पहला पैरा अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है । यदि उसने पाठक में रुचि पैदा नहीं की तो समाचार पढ़ा ही नहीं जाएगा । इसे यूँ समझिए, यदि कोई व्यक्ति किसी शादी-ब्याह के घर से लौटे और अपने परिवार वालों को उसकी सूचना देने लगे तो सबसे पहले वह मुख्य बातें बताएगा, जैसे कि किस के घर शादी थी, वर-वधू कैसे थे, क्या दहेज मिला, बरातियों को क्या परोसा गया आदि? ब्याह वाले घर पहुँचने में उसे कितनी दिक्कत उठानी पड़ी या वहाँ उसे कौन संगी-साथी मिले आदि गौण बातें है जिनकी जानकारी बाद में देगा । पांचों सवालों से मिलने वाली जानकारी महत्वपूर्ण है जो पहले पैरा में आ जानी चाहिए ।

एक और मिसाल । कृषि मेले की खबर लिखनी हो तो यही क्रम अपनाना होगा कि किन फसलों के बीज प्रदर्शित किए गए थे, उन किस्मों के नाम क्या है, उनसे कितनी उपज मिलने की संभावना है और प्रति एकड़ खर्च में कितनी कमी होती है और उपज में कितना लाभ मिलता है । लेखक पाठक के सामने नहीं होता और पाठक को पूरी छूट है कि वह लेख को पड़े या न पढ़े । सामने बैठे व्यक्ति की बात मन मानकर भी सुननी पड़ती है, पर समाचार पर एक नजर डालकर छोड़ दिया जाता है, यदि वह रोचक और उपयोगी न लगे । पहली नजर निर्णायक होती है । उसी से पाठक फैसला करता है कि वह उस समाचार को पढ़े या न पढ़े । अच्छा लेखक सदा इस बात को ध्यान मे रखता है कि पाठक की पहली नजर उसके लिखे समाचार को पढ़ने योग्य माने क्योंकि उसी पर लेखक की सफलता का दारमोदार है ।

आपने दिल्ली के पूसा कृषि अनुसंधान केन्द्र से जानकारी ली और उसे उसी क्रम में लिख दिया जिसमें आपने सूचना जमा की थी, तो आपके पास जानकारी लगभग इस तरह होगी - 'बहुत समय से पूसा अनुसंधान केन्द्र में खोज हो रही थी कि पौधों को पोषक पदार्थ कैसे दिए जाए जिससे पौधे उनका अधिक से अधिक भाग सोख सकें । जड़ों की बजाय पत्तियों पर नत्रजन छिड़क कर देखा गया

कि पौधों ने उन्हें जल्दी सोख लिया । जिस कारण नत्रजन कम मात्रा में देने की जरूरत पड़ी । यूरिया से नत्रजन देना अधिक लाभकारी पाया गया, क्योंकि वह जल्दी पानी में घुल जाता है और उसमें नत्रजन की मात्रा अधिक होती है । इस तरह छिडका 50से 60 फीसदी नत्रजन 34 से 48 घंटों में सोख लिया जाता है । दूसरे, यूरिया कीटनाशक के साथ भी छिड़का जा सकता है जिससे मजदूरी का खर्च कम पड़ता हैं । पूसा अनुसंधान केन्द्र के नतीजों से यह भी पता चला कि यूरिया का 4 फीसदी घोल सबसे अच्छे नतीजे देता है ।

आप देखेंगे कि ऊपर दिए पैरा का सबसे महत्वपूर्ण अंग अंतिम वाक्य है जिसमें दो बातें बताई गई हैं - एक अनुसंधान देश के जाने-माने पूसा केन्द्र पर हुआ और, दो यूरिया के 4 फीसदी घोल का छिड़काव सबसे अधिक लाभकारी पाया गया । इस उपयोगी जानकारी को पाने के लिए पाठक को पूरा पैरा पढना होगा । संभव है वह पैरा का पहला वाक्य पढ़कर छोड दे इस विचार से कि उसमें उसके लाभ की कोई बात नहीं है । पर यदि इसी पैरा को नीचे दिए ढंग से लिखा जाए तो कोई कारण नहीं कि कोई भी किसान उसे पढ़े बिना रहेगा- 'दिल्ली के पूसा अनुसंधान केन्द्र में किए प्रयोगों से पता चला कि पौधों की जड़ों की बजाय उनकी पत्तियों पर यूरिया का 4 फीसदी घोल छिड़कना सबसे अधिक लाभकारी है । यूरिया पानी में जल्दी घुल जाता है और उसमें नत्रजन की मात्रा अधिक होती है । पत्तियों पर छिड़का 50 से 80 फीसदी नत्रजन 34 से 48 घंटों में सोख लिया जाता है । उसे कीटनाशक के साथ भी दे सकते हैं जिससे मजदूरी का खर्च कम हो जाएगा ।'

अच्छे लेखन की अन्य मिसाल पढ़े-. 'चूरू ब्लाक के श्री साधुराम किसान ने एक एकड़ में 137 मन धान उगाकर जिले में सबसे अधिक उपज लेने का रिकार्ड कायम किया । उन्होंने धान की अधिक उपज देने वाली किस्म ' लाईचुंग नेटिव- 1 ' लगायी थी । उसी ब्लाक के श्री संग्राम सिंह ने उसी किस्म से 95 मन उपज ली । चार अन्य किसानों ने 70 मन प्रति एकड़ उपज ली । इन प्रयोगों से पता चलता है कि इस ब्लाक में अगले साल अधिक किसान इस किस्म को अपनाकर ब्लाक का नया किर्तिमान कायम करेंगे ।

आप देखेंगे कि इस समाचार के पहले वाक्य को ही पढ़कर किसान पूरे समाचार को ध्यान से पढ़ेंगे या कान लगाकर सुनेंगे, क्योंकि इसमें यह सुखद सूचना है कि इस किस्म से सामान्य किस्म के मुकाबिले धान की लगभग तीन गुनी उपज हो सकती है । इस खबर में पूरी जानकारी है जो पाठक को चाहिए-क्या, कौन, कहाँ आदि का जवाब उसे मिल गया । आगे के पैरे में बताया जाए कि यह कैसे संभव हुआ । इसलिए ध्यान रखिए कि समाचार की मुख्य बातेंपहले वाक्य या पिछले पैरा में आ जाए।

8.2.2.1.2 उर्ध्व त्रिकोणात्मक लेखन

कृषि पत्रिका के लिए लिखा समाचार ऐसे त्रिकोण की तरह होता है जिसका आधार ऊपर और बिन्दु नीच होता है, यानि सबसे महत्वपूर्ण बात सबसे पहले, उसके बाद उससे कम महत्वपूर्ण बात, उसके बाद उससे कम महत्वपूर्ण और अंत में सबसे कम महत्वपूर्ण बात, जबकि सामान्य त्रिकोण में उसका सबसे महत्वपूर्ण आधार सबसे नीचे होता है । त्रिकोण का आधार बदलने से पाठक को काम की बात झटपट शुरू में ही मिल जाती हैं जिसे पढ़कर वह तय कर सकता है कि खबर उसके काम की है या नहीं । बाकी को वह पढ़ना चाहे तो पढ़े, वरना छोड़ दे । इस तरह के लेखन का लाभ यह भी है कि संपादक जगह की कमी के कारण सबसे नीचे के एक या दो पैरा, जैसी जरूरत हो, पूरे समाचार

का महत्व कम किए बिना काट सकता है । एक अन्य मिसाल लें - ' श्री किशन लाल ने जिनकी उम्र 56 साल है चूरू ब्लाक के किशनी गाँव में पिछले साल धान की दो फसलें ली थीं, पर इस साल सूखे के कारण एक ही फसल ले सका । विकास अधिकारी ने उसे समझाया कि वह धान की दूसरी फसल की बजाय रागी की फसल ले जिसमें पानी कम लगता है और 25 मन धान की बजाय 40 मन रागी मिल जाती है जिससे मुनाफा धान के मुकाबिले फी एकड़ लगभग 100 रुपए अधिक होता है ।

कृषि पत्रिका के लिए यह खबर इस तरह लिखी जानी चाहिए- 'चूरू ब्लाक में किसनी गांव के श्री किशन लाल ने बताया कि सूखे की मौसम में धान की दूसरी फसल लेने के बजाय रागी की फसल उगायी जाय तो मुनाफा 100 रुपए फी एकड़ अधिक होगा । ' आपने देखा कि पहले पैरे में सभी अपेक्षित जानकारी आ गई । इसके नीचे अन्य विवरण दिया जा सकता है । यहाँ यह बता देना भी जरूरी है कि क्या, कौन,कहाँ, कब, कैसे से जवाब में मिलने वाली जानकारी में सबसे अधिक आकर्षक बात क्या है और किस तत्व को सबसे अधिक महत्व दिया जाए, यह आप अभ्यास से सीख जाएंगे ।

पहले पैरा को आकर्षक बनाने के लिए उसमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात लिखने की अन्य दो मिसालें पढ़िये -

1. 'धान की भूसी से जो पहले फैक दी जाती थी या पशुओं को खिला दी जाती थी तेल निकालकर भारी मुनाफा कमाया जा सकता है ।' इस समाचार को पढ़कर धान की खेती करने वाला हर किसान चमक उठेगा और तुरन्त उसे पढ़ डालेगा ।

2. 'श्री बालक राम ने एक ही खेत में एक साल में धान की तीन फसलें लेकर असंभव को संभव कर दिखाया ।' लेखक की सफलता का राज यह है कि पहले वाक्य में वह ऐसी बात दे जिसे पाठक बिना पढ़े न छोड़े । उसके बाद अन्य बातें दे । कभी -कभी ऐसा होता है कि पहले वाक्य में पाठक की दिलचस्पी पैदा कर उसे आग पढ़ने के लिए ललचाया जाता है और सबसे आकर्षक या महत्वपूर्ण बात बीच में या नीचे दी जाती है, पर इसके लिए अनुभव और लेखन कला का अच्छा ज्ञान चाहिए। नए लेखक को पहले वाक्य या पैरा में ही समूचा सारांश देने का अभ्यास करना चाहिए ।

8.2.2.1.3 असरदार शब्द : छोटे वाक्य

असरदार शब्दों को छोटे-बड़े वाक्यों में पिरोना प्रभावकारी लेखन शैली कहलाती है । जिससे पाठक को न सिर्फ जानकारी मिले बल्कि पढ़ते समय वह उसमें रुचि भी ले, जो अभ्यास व अनुभव से सीखी जा सकती है । शब्द ऐसे हों जिनसे सामान्य पाठक परिचित हो । शब्द सामान्यता हों, पर घिसे पिटे न हों । कुछ अंग्रेजी शब्द भी इस्तेमाल किए जा सकते हैं जो प्रचलित हो चुके हैं, जैसे मोटर, पम्प, ट्रेक्टर, फ्यूज आदि । छोटे शब्द अधिक सक्षम होते हैं । जो लिखे वह व्यावहारिक और धरातल की बात हो जिसे पाठक अपने अनुभव के दायरे में समझ सके । तभी वह उसे मानने को प्रोत्साहित होगा । शब्दों के वाक्य और वाक्यों से पैरा बनाकर लेखन पूरा करें । वाक्य छोटे- बड़े हों, उसी तरह पैरे भी छोटे -बड़े हों जिससे आकर्षण बढ़ेगा । एक वाक्य से दूसरे वाक्य और एक पैरे से दूसरे पैरा में विचार ऐसे पिरोए जाने चाहिए कि पाठक स्वाभाविक रूप से आपकी बात समझता जाए और उसे पीछे लौट कर पढ़ना न पड़े । एक भाव से दूसरा भाव निकलता हो ।

8.2.2.2 लेख

कृषि पत्रिका में समाचारों के अलावा लेखों का भी महत्वपूर्ण स्थान है । लेख अनेक स्थानों से जानकारी प्राप्त कर या विशेषज्ञों व किसानों से भेंटवार्ता कर लिखे जाते हैं । लेख कैसे लिखा जाए, उसे शुरू कैसे किया जाए, वह समाचार से कैसे भिन्न है, इन बातों को समझ लेने पर ही उत्तम लेख लिखना संभव हो सकेगा । लेख में समाचारों की पृष्ठभूमि की जानकारी दी जाती है, जिससे पाठक समाचारों को सही परिपेक्ष्य में समझ सके । तभी कहा जाता है खबरों के पीछे ' क्या' की जानकारी लेख में दी जाती है । संदर्भ विशेष में आगे क्या होने वाला है, इसकी चर्चा भी होती है । इसी कारण पाठक को लेख पढ़ने में अधिक रस आता है । समाचार में हाल की घटना की ही जानकारी होती है, पर लेख में 20 साल पुरानी बात भी लिखी जा सकती है यदि उसमें पाठक की रुचि पैदा की जा सके । जैसे, गेहूँ की बोनी किस्मों की सबको बखूबी जानकारी है पर इन किस्मों का विकास मैक्सिको देश में डाक्टर बोर्लाग ने कैसे किया, इस रोमांचकारी घटना की जानकारी लेख में दी जा सकती है । समाचार में लिखने का निश्चित तरीका होता है, पर लेख में लेखक को आजादी है, बशर्ते वह अपने पाठकों की रुचि बनाए रखे । लेख में पाठक के मन को छू लेने की भी क्षमता होती है ।

8.2.2.2.1 कैसे लिखे लेख?

लिखने की कला तो चाहिए ही जो बहुधा जन्मजात नहीं होती, बल्कि सीखी जाती है । साथ ही आस-पास की दुनिया को गहराई से देखने समझने और उसकी जानकारी पाठकों को देने की लालसा भी होनी चाहिए । जो खबर छप चुकी है, उसके आगे की जानकारी पर लेख लिखा जा सकता है । मसलन, यह खबर छपी कि अमुख किसान ने अपने जिले में प्रति एकड़ सबसे अधिक उपज पैदा कर इनाम पाया । इस खबर को पढ़ कर लेखक को विचारना होगा कि इनाम पानेवाले किसान ने खेती के क्या तरीके अपनाए थे, कौन सी किस्म बोई थी, कब बोई थी, उसमें खाद- पानी कितना और कब दिया था, कीटनाशकों का छिड़काव किया था या नहीं, किया- था तो कब और किस रसायन का, वह किसान शिक्षित है या नहीं, कृषि मेलों में जाता रहा है या नहीं, क्या उसके परिवार में सदा उन्नत खेती होती थी आदि- आदि । इस तरह के अनेक सवालों का जवाब उस किसान से भेंटकर और उसे पड़ौसियों से बात कर जाना जा सकता है । यह सब जानकारी एक बढ़िया लेख के लिए उचित सामग्री होगी ।

लेख लिखने के लिए अनेक विषय हो सकते हैं । गाँवों में चूहों का प्रकोप, फसलों पर खास कीड़े का हमला, किसान सम्मेलन, उर्वरक प्रदर्शन आदि । इसके लिए लेखक को किसानों से बराबर सम्पर्क रखना होगा । सप्ताह में कम से कम एक बार (संभव हो तो अधिक बार) किसी गाँव में जाकर किसानों के बीच बैठ उनसे सवाल कर और उनकी बातें सुनकर कई लेखों के लिए सामग्री जुटाई जा सकती है । ध्यान रहे कि व्यावहारिक जानकारी ही आपके लेखों में स्थान पाए, क्योंकि पाठक उसे रुचि से पढ़ेंगे । कृषि लेख लिखने के लिए लेखक को विशेषज्ञ होने की जरूरत नहीं, उसे समझदारी और सहानुभूति से वार्ता कर उचित सामग्री जुटानी है । लेख में बातचीत के कुछ अंश ' जस के तस' भी दिए जा सकते हैं, विशेषत: जबकि लेख किसानों के अनुभवों के आधार पर लिखा जा रहा हो ।

तकनीक पर आधारित लेख संभवत: रोचक न हो, पर यदि उस तकनीक का प्रयोग अमुक किसान ने कैसे किया, क्या स्थानीय परिस्थिति के अनुसार उसमें बदलाव किया, और उसे कितनी सफलता मिली? इन बातों को पाठक बड़े शौक से पढ़ेंगे । यदि स्वयं नहीं पढ़ सकते तो पढ़वाकर सुनेंगे ताकि अन्य किसानों के अनुभवों से वे भी अपना रास्ता बना सके । किसानों को नई राह पर ले जाने के लिए उनके उन्नत पड़ौसियों के अनुभव पर आधारित लेख सशक्त माध्यम है । तकनीकी जानकारी को किसानों के अनुभवों में गूंथकर पढ़ने को दिया जाए तो पाठक बहु त शौक से उसे पढ़ेंगे और स्वीकार करेंगे । अनुभवों पर आधारित लेख व्यावहारिक तो होंगे ही, विश्वसनीय भी होंगे । ऐसे लेख सवाल-जवाब की शैली में भी लिखे जा सकते हैं, यानि भेंटकर्ता ने सवाल पूछा, किसान ने जवाब दिया और सवाल-जवाब जैसे के तैसे लेख में अंकित कर दिए गए ।

किसी भी विषय पर लेख लिखने से पहले विचार कर लेना ठीक होगा क्या पाठक उस विषय की जानकारी पाकर लाभान्वित होंगे । विषय सामयिक होना चाहिए, यानी जिस समय लेख छपे उस समय की परिस्थिति के अनुकूल हो । मसलन, जो जानकारी रबी की मौसम में लाभकारी सिद्ध हो सकती है उसे खरीफ की मौसम में देने का क्या लाभ? खरीफ में पाठक को खरीफ-संबंधी विषयों की ही जानकारी दें । यह भी ध्यान रहे कि जिस विषय पर आप लिख रहे हैं उसमें समस्त पाठकों की नहीं तो अधिकतर पाठकों की रुचि होनी चाहिए । यह भी ध्यान रखें कि उस विषय पर उतनी सामग्री अवश्य दें जिससे पाठक के मन में उठे सवालों का जवाब उन्हें मिल जाए ।

8.2.2.2.2 रूपरेखा

लेख की सामग्री जुटाकर जब आप लिखने बैठे तब एक रूपरेखा जरूर बना लें किं लेख के शुरू में क्या, मध्य में क्या और आखिर में क्या जानकारी देंगे । जिस तरह भवन निर्माण के लिए पहले नक्शा तैयार किया जाता है, उसी तरह लेख के लिए उसकी रूपरेखा बना लेनी जरूरी है । अधिक अभ्यास हो जाने पर संभव है कि आपको कागज पर रूपरेखा बनाने की जरूरत न पड़े और रूपरेखा आपके दिमाग में बन जाए, पर सदा कोई व्यवस्था तो सामने रखनी ही होगी ।

यदि आप पशुओं की थनैला बीमारी पर लेख लिख रहे हैं तो रूपरेखा कुछ इस तरह बनाएं-

1. थनैला बीमारी क्या होती है - और उसकी पहिचान कैसे की जा सकती है ।
2. बीमारी कैसे फैलती है : गंदे आवास के कारण, गंदा पानी पिलाने के कारण, गलत तरह से दूध निकालने के कारण, या कुपोषण के कारण?
3. बीमारी की पहिचान : - थनों पर निशान, दूध की रंगत में फर्क, पशु की भूख मर जाना आदि
4. बीमारी को रोकने के उपाय : आवास और पानी की अच्छी व्यवस्था, पशु चिकित्सक की सलाह आदि ।

रूपरेखा बनाने में थोड़ा समय जरूर लगेगा, पर लिखते समय आसानी हो जाएगी और लेख के भिन्न-भिन्न भागों में स्वाभाविक तालमेल बैठ सकेगा । एक पैरा से दूसरा पैरा पढ़ते हु ए पाक की रुचि बनी रहेगी और लेख के अंतिम पैरा को पढ़कर वह उसी नतीजे पर पहुँचेगा जिस पर आप उसे ले जाना चाहते थे । तभी आपका लेख सार्थक बनेगा । हम यहीं एक बार फिर जोर डालकर कह दें

कि समाचार की तरह लेख का पहला पैरा भी बहुधा निर्णायक होता है । वह पाठक को लुभा ले या उसे उचाट कर दें । लेख में रोचकता डालने के दो तरीके हैं -

1. या तो उसे रुचिकर सामग्री से भरे या
2. रोचक ढंग

लक्ष्य यह होना चाहिए कि पाठक पहला पैरा पढ़कर दूसरा-तीसरा और अन्य सभी पैरे पढ़ने के लिए तैयार हो जाए । हर पैरा जानकारी में या लिखने के ढंग में रोचक हो ।

यदि आप स्वतंत्र लेखक हैं तो आपको यह भी विचारना होगा कि जिस पत्रिका के लिए आप लिख रहे हैं वह किस प्रकार के लेख पसन्द करती है, लंबा या छोटा लेख और किन विषयों पर । यह जरूरी नहीं कि आपकी जुटायी सब सामग्री एक लेख में आ जाए । लिखते समय आपको अंदाज जो जाएगा कि कौन-सी सामग्री देना ठीक है, कौन-सी नहीं । ठूंस-ठूंस कर भरने से पाठक घबरा उठेगा । यदि सामग्री के भिन्न पहलुओं के बीच ठीक तालमेल नहीं हुआ तो संभव है वह लेख को बीच में ही छोड़ दे । सामग्री चाहे थोड़ दें, पर लेख कसा हो जिसमें वे खास बातें बहुत साफ झलकती हों जिनकी ओर आप अपने पाठकों का ध्यान खींचना चाहते हैं ।

8.2.2.2.3 शीर्षक

समाचार का शीर्षक क्रियात्मक हो, जैसे ' तूफान में 15 व्यक्ति डूबे ', 'प्रधान मन्त्री ने घोषणा की' और 'भाजपा भ्रष्टाचार के खिलाफ अभियान छेड़ेगी । ' क्रिया डालकर शीर्षक गतिमान बन जाता है । लेख का शीर्षक लिखने के बाद सोचें या लिखने से पहले ही सोच लें । शीर्षक छोटा हो, पर उसके शब्दों में ऐसी शक्ति हो कि पाठक शीर्षक के नीचे छपे लेख को बरबस पढ़ने को उत्सुक हो उठे । यदि शीर्षक ऐसा न हुआ तो पाठक लेख को पड़े बिना आगे बढ़ जाएगा और आपकी मेहनत बेकार जाएगी । शीर्षक में इतनी बात आ जाए जितनी से पाठक को लेख के विषय की जानकारी मिल जाए । लेख के कुछ शीर्षक : 'सोनियागांधी के नेतृत्व में कांग्रेस का भविष्य', 'कर-प्रणाली में सुधार की योजनाएं और 'हृदय रोग- नई खोजें ।'

8.2.3 भेंट-वार्ता

जैसे पहले लिखा जा चुका है, लेखों के लिए जानकारी का एक बड़ा स्रोत उन्नत किसान या विशेषज्ञ है। यदि किसान असरदार और क्षेत्र में जाना माना है तो उसके अनुभवों पर पाठक अधिक ध्यान देंगे । वह लेख किताबी ज्ञान पर नहीं, अनुभवों पर आधारित होगा जिस कारण अधिक पठनीय बनेगा । यदि व्यक्ति जिससे आपने भेंट की है, नामी विशेषज्ञ है तो ' सोने पर सुहागा' हो जाएगा । एक लेख में दो-या तीन भेंटवार्ताओं का समावेश भी किया जा सकता है । जैसे सुधरे बीज पर लेख में किसने बीज विकसित किया और किसने उपजाया, दोनों व्यक्तियों से भेंट कर जानकारी देने से लेख का महत्व बढ जाएगा पाठक जानना चाहेंगे कि विशेषज्ञ ने नई किस्म किस परिस्थिति में विकसित की और उसकी क्या क्षमता है । व्यावहारिक रूप में उससे कितनी उपज मिलती है, यह किसान से मालूम हो जाएगा । उससे यह भी मालूम हो जाएगा कि पुरानी किस्म से उसे कितनी कम उपज मिलती थी । इसी तरह पशुओं के पोषण पर लेख में पशु चिकित्सक और पशुपालक दोनों से जानकारी लेना ठीक होगा ।

8.2.3.1 भेंट की योजना

भेंट से पहले आप तय कर लें कि किससे भेंट करनी है और कहां? किसान से भेंट करनी है तो उसके घर पर करें और तब जब वह फुर्सत में हो, न कि हाट-बाजार में आते-जाते समय। विशेषज्ञ और तब से भेंट करनी हो तो उसकी प्रयोगशाला में करें जहां वह अपने प्रयोग के बारे में व्यवहारिक रूप से समझा भी सके। भेंट करने से पहले आपको विषय और भेंट किए जाने वाले व्यक्ति के बारे में थोडी-बहुत जानकारी ले लेनी चाहिए। जिससे आप गैस्जरूरी सवाल पूछ कर न उसका समय गंवाएं, न अपना। विषय की प्राथमिक जानकारी होने से आप उचित प्रश्न पूछेंगे जिनके उत्तर में आपको उपयोगी सामग्री मिलेगी। यदि आपके प्रश्न सूझ-बूझ से सम्पन्न हुए तो सामने बैठा व्यक्ति उत्साहित होगा और आपको पर्याप्त जानकारी देगा। बहुधा विशेषज्ञ भेंट देने से कतराते हैं। उन्हें डर रहता है कि लेखक कहीं उनकी बातों का गलत मतलब न निकाल लें और अर्थ का अनर्थ हो जाए। इसलिए अच्छा होगा यदि आप विशेषज्ञ को भरोसा दिला दें कि लेख के प्रकाशन से पहले आप उसे लेख की पाण्डुलिपि दिखा देंगे और उसमें कोई त्रुटि हुई तो उसे सुधार देंगे।

8.2.3.2 प्रश्नावली निर्माण

भेंट से पहले एक कागज पर वे सवाल लिख लें तो आप पूछना चाहते हैं। बहुत सवाल तो बातचीत से पैदा होंगे, पर मोटे-मोटे सवालों की सूची सामने होने पर आप अपने दायरे से नहीं भटकेंगे। ठीक सवाल पूछेंगे तो जवाब भी आपको उचित मिलेगा, जिससे लेख की पठनीयता बढ़ेगी। भेंट के समय जवाब आप अपनी नोट बुक में लिखते जाएं, क्यों कि घर या कार्यालय लौट कर आप उन सब बातों को पूरी तरह याददाश्त से लिख नहीं पाएंगे जो आपने सुनी थी। आजकल लिखने की बजाय टेपरिकार्डर साथ ले जाने का रिवाज भी है। भेंट के समय टेप रिकार्डर सामने रख दिया जाता है जिसमें सवाल और जवाब दोनों रिकार्ड हो जाते हैं और भेंट के समय आपको समय लिखने में नहीं जाता, बल्कि जवाबों से नए सवाल बनाने में लगा रहता है।

संभव है आपकी पहली भेंट- वार्ता सफल न हो, यानि आप लेख के लिए पूरी सामग्री न जुटा पाएं। हताश न हों, बल्कि सोचे कि किस तरह के सवालों से किसान व विशेषज्ञ अधिक बातें करने को उत्सुक होंगे और दिल खोलकर बातें करेंगे। यहाँ हम बता दें कि बैठते ही ऐसे सवाल पूछें कि सामने बैठा व्यक्ति विचलित हो जाए। सर्वप्रथम सद्भाव और मित्रता का हाथ बढ़ाये जिससे वह आश्वस्त होकर बातें करने लगे, न कि शंकित या भयभीत होकर पूरी बात न बताए। सद्भाव रहेगा तो ऐसा व्यक्ति भी जो कम बोलता है आपसे बात करते समय शब्दों की कंजूसी नहीं करेगा। भेंट में शुरू में ही उसे बता दें कि आप जानकारी क्यों चाहते है और आप जानकारी लेकर लेख के रूप में किरन पत्रिका में छपने भेजेंगे आदि। इससे उसका हौसला बढ़ेगा और वह आपसे खुलकर बातें करेगा। सवाल-जवाब का सिलसिला मैत्रीपूर्ण संवाद जैसा हो, न कि अदालत के कटहरे में खड़े गवाह से जिरह की तरह।

यदि भेंट किए जाने वाला व्यक्ति विषय से हटकर ऐसी सूचना देने लगे जिससे आपका कोई मतलब नहीं तो उस सूरत से ऐसा सवाल पूछ लें कि वह अपनी राह छोड़कर आपकी राह पर आ जाए, पर इसमें होशियारी की जरूरत है। वह व्यक्ति यह न समझ ले कि उसकी बात आपने बीच में काट दी। किसी जवाब के बारे में आपको संशय हो तो फिर पूछ लें कि क्या कहा गया था। इससे आप

बाद की गलतफहमी से बच जाएंगे । ऐसा न हो कि आपको लेख के लिए सामग्री कम पड़ जाए, नोट करते समय जितना अधिक लिख सकते हैं । लिख लें । जहाँ आवश्यक हो, जवाब को ज्यों का त्यों लिख लें और उसी तरह लेख में दे दें । इससे लेख की विश्वसनियता बढ़ेगी । ऐसा कोई तथ्य न दें जिसके बारे में आपको शक हो कि वह बात कही गई थी या नहीं । भेंट के अंत में भेंट किए गए व्यक्ति की तस्वीर या खेत, प्रयोगशाला की तस्वीर मांग लें जिससे लेख के प्रति पाठकों में अधिक आकर्षण पैदा होगा । यदि चित्र मिल जाए और उपयुक्त हो तो उसका प्रयोग उत्तम होगा ।

8.2.4 कृषि प्रश्नोत्तरी

कृषि पत्रिका में समाचार और लेख देना तो आवश्यक है ही, प्रश्नोत्तरी के रूप में पाठकों द्वारा पूछे सवाल और विशेषज्ञों द्वारा दिए उनके जवाब पत्रिका के महत्व को बढ़ा देंगे । इसका एक बड़ा लाभ यह भी होगा कि पाठक पत्रिका में अपने नाम छपे देखकर पत्रिका के भक्त बन जाएंगे । हर छोटा-बड़ा शहरी पत्र अपने पाठकों के पत्रों का सारांश प्रकाशित करता है । प्रश्नोत्तरी में पाठकों को अपनी सामयिक समस्याओं का उत्तर भी मिल जाएगा । ऐसी प्रश्नोत्तरी प्रकाशित करने से किसान, विशेषज्ञ और पत्रिका तीनों को लाभ है । किसान की समस्या का समाधान होगा, विशेषज्ञ को यह पता लगता रहेगा कि खेत खलिहान की व्यावहारिक समस्याएं क्या हैं जिनका वे हल खोजेंगे और पत्रिका को लाभ ही लाभ है । उसके पाठक संतुष्ट होंगे और पत्रिका के प्रति अधिक आकृष्ट होगे ।

व्यक्तिगत प्रश्नों के जवाब पत्रिका के माध्यम से नहीं, बल्कि अलग डाक से भेजे जा सकते हैं । प्रश्नोत्तरी में सिर्फ ऐसे सवाल शामिल किए जाएं जो प्रश्नकर्ता के ही नहीं, बल्कि सामान्य रूप से बहु त पाठकों के हो । जिसने सवाल पूछा है वह तो विशेषज्ञ के जवाब का लाभ उठाएगा ही, अन्य किसान भी उसे पढ़कर उसका लाभ लेंगे । नीचे हम कुछ प्रश्न और उनके उत्तर दे रहे हैं -

प्रश्न : - गन्ने की खेती में कितना उर्वरक कब और कैसे दिया जाए?

उत्तर - फी हैक्टर 250 क्विंटल खूब सड़ी गोबर की खाद के अलावा तत्व के रूप में 150 किलो नत्रजन, 80 किलो फास्फोरस और 100 किलो पोटाश दें । नत्रजन का 1/3 भाग और पूरा फास्फोरस व पोटाश बुवाई से पहले बेसल डेसिंग में दें ।

प्रश्न - जायद में मक्का की खेती की जानकारी दें ।

उत्तर - मक्का के लिए दुमट भूमि अच्छी होती है । जायद में जल्दी पकने वाली किस्में, विजय, नवीन, तरूण, गंगा- 2 और देशी टा- 41 हैं । जायद में मक्का की बुवाई 15 फरवरी तक कर देनी चाहिए । देर से बोने में पौधों में जीरा निकलते समय लू चलने के कारण पराग-कणों से सूख जाने का डर रहता है ।

बौध प्रश्न -

1. कृषि पत्रकारिता से आपकी अपेक्षाएं क्या हैं?
2. कृषि लेखन कृषि हितों का प्रहरी क्यों कहा जाता है?
3. कृषि लेखन में आवश्यक सावधानियां क्या होती है?
4. कृषि लेखन के विविध प्रकारों पर प्रकाश डालिए?

8.3 कृषि पत्रिका का संपादन

समाचार या लेख का संपादन कृषि पत्रिका के कार्यालय में आ जाने पर शुरू होता है । जो व्यक्ति इसे संपादित करता है उसे 'उपसंपादक' या 'सब-एडिटर' कहते हैं ।

8.3.1 पाण्डुलिपि संपादन का दायित्व

संपाक भले ही कोई हो, कृषिपत्रिका के संपादन का दायित्व मुख्यरूप से उपसंपादक को ही निवाह करना होता है उसे निम्नलिखित दायित्व वहन करना होता है ।

1. यदि समाचार का प्रारम्भिक पैरा उस ढंग से नहीं लिखा गया है, जैसे पिछले पृष्ठों में बताया जा चुका है इसी प्रकार से तो उसमें शुद्धि कर उसे ठीक करेगा ।
2. अक्षर या मात्रा की अशुद्धि भी ठीक करेगा ।
3. पैरेग्राफों का क्रम ठीक करेगा और उनके बीच थोड़ी- थोड़ी दूर पर छोटे-छोटे शीर्षक लगाएगा जिन्हें पढ़कर उनके नीचे के पैराग्राफों में क्या है मालूम हो जाएगा । '
4. आखिर में सबसे ऊपर हैडिंग या शीर्षक देगा । यह स्पष्ट रूप से शीर्षक लिखने की कला बड़ा महत्व रखती है, क्योंकि हैडिंग से ही पाठक का ध्यान समाचार या लेख पर जाता है । शीर्षक आकर्षक होगा तो उसे पढ़कर पाठक पहला या अन्य पैराग्राफ जरूर पढ़ेगा । यदि वह आकर्षक नहीं हुआ तो पाठक बिना रुके आगे बढ़ जाएगा ।

8.3.2 उपयोगिता की कसौटी

कृषि पत्रिका के लिए समाचार व लेख ऐसे व्यक्ति भी भेजेंगे जिन्हें पत्रकारिता का बिलकुल ज्ञान नहीं होता, पर अपने विषय को बखूबी जानते हैं । पत्रिका हर लेख या समाचार को उसकी उपयोगिता की कसौटी पर कसकर और उसे सही रूप में ढाल कर प्रकाशित करेगी । यही उपसंपादक का मुख्य काम है और इसी को संपादन कहते हैं । अशुद्धियाँ शुद्ध करना तो है ही, समाचार या लेख को सही रंग-रूप देना भी शामिल है जो प्रशिक्षित और अनुभवी पत्रकार ही कर सकता है । कभी- कभी तो समाचार व लेख को नए ढंग से लिखना भी पड़ जाता है या यूं कहें कि तथ्यों को सजीव बनाना होता है ।

बहुधा पत्रिका के संवाददाता को तो पाठक जानते हैं, पर उपसंपादक को नहीं जानते क्योंकि वह कार्यालय में बैठता है, पर उसका काम संवाददाता के काम से कम महत्वपूर्ण नहीं होता । कभी एक ही विषय पर दो -तीन स्थानों से आई सामग्री को जोड़कर लेख या समाचार बनाना होता है, यह काम भी उपसंपादक का है । समाचार या लेख को अधिक आकर्षक बनाने के लिए उसके साथ सामान्य या रंगीन तस्वीर भी दी जा सकती है । उपसंपादक तस्वीर के ऊपर शीर्षपंक्ति या कैप्सन या कुछ लाइनें नीचे देता है जिनसे पता लग जाए कि तस्वीर का क्या आशय है? बहुत बार तस्वीर शब्दों से अधिक बोलती है । पाठक बोझिल पैराग्राफों से भाग कर छायाचित्र (तस्वीर) में रम जाता है । तस्वीर दिमाग पर जोर कम डालती है और अधिक बोलती है ।

8.3.3 छायाचित्र का प्रदर्शन

छायाचित्र को प्रदर्शित करने की भी कला है । छायाचित्र के किस भाग पर जोर दिया जाए और किस पर नहीं जिससे तस्वीर अधिक मुखरित हो उठे, यह अनुभवी उपसंपादक अच्छी तरह जानता है । यह कला हर कोई अनुभव से सीख सकता है । ऐसी तस्वीर छांटिए जो फोकस में हो और धुंधली न हो । तस्वीर के बजाय ड्राइंग भी दी जाती है । तात्पर्य यह है कि लेख पाठक को रोचक लगे और जल्दी उसका आशय पाठक की समझ में आ जाए । समाचारों व लेखों के साथ कार्टून, चार्ट और ग्राफ भी दिए जाते हैं । उन्हें देना अच्छा है, क्योंकि पत्रिका के किसी भी पृष्ठ पर पाठक की नजर सबसे पहले उस पर छपी तस्वीरों पर जाती है ।

8.3.4 प्रूफ रीडिंग

समाचार या लेख कंपोज हो जाने के बाद प्रूफ पढ़ने का काम प्रूफ रीडर या उप संपादक करेगा । अशुद्धियों के लिए खास चिहन लगाए जाते हैं जिन्हें देखकर छापेखाने में अशुद्धियाँ ठीक की जाती हैं । उसके बाद कौन समाचार या लेख किस कालम या प्रष्ठ पर जाएगा, यह उपसंपादक तय करके डमी बनाकर निर्देश करेगा । फिर पूरे-पूरे पेज बनाकर फर्मे छापे खाने में छपने भेज दिए जाएंगे ।

8.4 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रकाशन योग्य समाचार के पाँच मुख्य तत्व क्या है? उन्हें मिसालें देकर समझाइए?
2. भेंट करने जाने से पहले भेंटकर्ता को क्या सावधानियां बरतनी चाहिए?
3. लेख की रूपरेखा क्या होती है? लिखना शुरू करने से पहले उसे बनाने के क्या लाभ है?
4. लेख किसे कहते हैं? वह समाचार से किस रूप में भिन्न है?
5. नीचे दो समाचारों की सामग्री दी गई है, उन्हें सही रूप देकर शीर्षक दें -

1. राजस्थान के किशनी गाँव (चूरू ब्लाक) में दो भाई सुखराम और बुद्धराम रहते हैं । उनका पेशा खेती है । वे छोटे किसान है । पैसे की तंगी और खेती के ज्ञान की कमी के कारण उनके खेतों में उपज बहु त कम होती थी । एक दिन उत्तर प्रदेश के पंतनगर से आए एक रिश्तेदार ने उन्हें बताया कि सीमित साधनों से भी खेती कर वे अपने खेतों से अधिक मुनाफा कमा सकते हैं, यदि वे पुराने बीजों की बजाय नए बीजों की खेती करने लगे । उनके रिश्तेदार ने बताया कि वह स्वयं पहले बहु त कम उपज ले पाते थे, पर जबसे उन्होंने पंतनगर का बीज उपजाना शुरू किया है, उनकी उपज दुगुनी हो गई है । यह सुनकर और बुद्वराम नया बीज इस्तेमाल करने को राजी हो गए । अपने रिश्तेदार की मदद से उन्हें अगली रबी में गेहूँ का नया बीज मिल गया जिसे उपजाकर उन्होंने भी अपने खेत से ड्योडी से अधिक उपज ली यह है कृषि अनुसंधान का कमाल।

2. सुखराम की गाय को थनैला रोग हो गया और दूध घट गया क्योंकि गाय कुछ खाती न थी और सुस्त पड़ी रहती थी एक दिन ग्राम सेवक ने उसकी गाय को देखकर बताया कि उसे थनैला रोग है, तुरन्त पशु-चिकित्सक को दिखाना चाहिए पहले तो सुखराम तैयार नही हु आ पर अन्य चारा न देख पड़ौस पशु-चिकित्सालय में ले गया जहाँ डाक्टर ने बताया कि यदि वह पशु को दो-तीन दिन और न लाता तो पशु की जान को खतरा बन सकता था डाक्टर ने दवा दी और एक सप्ताह में गाय

का स्वास्थ्य सुधर गया और वह पहले जैसा दूध देने लगी शुरू में गई की असावधानी के कारण होने वाले नुकसान से सुखराम बाल–बाल बच गया ।

8.5 परिशिष्ट समाचार का सही रूप

1. **विज्ञान का कमाल**

नए बीज ने गेहूं की ड्योडी उपज दी

गेहूं के नए सुधरे बीज को अपनाकर चरु ब्लाक (राजस्थान) के गांव किशनी में दो भाइयों श्री सुखराम और श्री बुद्धराम ने इस साल अपने खेतों में डेढ़ गुना उपज ली । इस बीज को पंतनगर अनुसंधान केन्द्र (उत्तर प्रदेश) ने विकसित किया था ।

दोनों भाई पैसे की तंगी थे और खेती के नए ज्ञान की कमी के कारण पुराने तरीके से खेती करते थे और कम उपज ले पाते थे पर जब उनके रिश्तेदार ने उन्हें पंतनगर के नए बीज के बारे में बताया तो वे उसकी मदद से नया बीज ले आए और उसे उपजाकर उन्होंने आपनी उपज बढ़ाई ।

2. अपने पशु को थनैला रोग से बचाएँ

थनैला रोग से पीड़ित अपनी गाय का इलाज श्री सुखराम ने पास के पशु-चिकित्सालय पर कराया। फलस्वरूप उनकी गाय एक सप्ताह में चंगी हो गई और पूरा दूध देने लगी । डाक्टर ने बताया कि यदि इलाज में दो-तीन दिन की देरी हो जाती तो गाय की जान को खतरा पैदा हो सकता था ।

बीमारी के कारण गाय कुछ खाती न थी और उसका दूध बहुत घट गया था । श्री सुखराम तय नहीं कर पाए कि क्या करें ? तभी एक दिन ग्राम सेवक ने आकर उन्हें बीमारी के बारे में बताया और बीमार गाय को तुरन्त पशु चिकित्सालय में ले जाने की सलाह दी ।

इकाई 9 पर्यावरण के लिए लेखन

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.1.1 पर्यावरण के लिए लेखन की आवश्यकता

9.1.2 पर्यावरण जीवन का यथार्थ

9.2 पर्यावरण-क्या समाचार है?

9.2.1 समाचार की पहचान

9.2.2 साप्ताहिक समाचार बुलेटिन

9.2.3 समाचार वितरण

9.2.4 संपादक के नाम पत्र

9.2.5 प्रेस की ताकत

9.2.6 प्रतियोगिताएं और पुरस्कार

9.3 पर्यावरण से तात्पर्य

9.3.1 पर्यावरण का अर्थ

9.3.2 पर्यावरण के अधीन विषय

9.3.3 सरकारी नीति

9.4 जीवित पशुओं के प्रति पर्यावरण चेतना

9.5 अर्थ-निर्णय प्रक्रिया का सिद्धान्त

9.5.1 अर्थ-निर्णय के छः सिद्धांत

9.5.2 सूचना विनिमय

9.6 समाजोपयोगी कार्य

9.6.1 उद्देश्य

9.6.2 छात्रों के लिए प्रेरणा

9.6.3 कूड़ा-कर्कट का उपयोग

9.7 पत्रकार, प्राकृतिक प्रकोप और पर्यावरण

9.8 पर्यावरण लेखन से गुणात्मकता प्रसार

9.9 सारांश

9.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.11 निबन्धात्मक प्रश्न

9.0 उद्देश्य

पिछले कुछ दशकों में पर्यावरण के लिए लेखन की प्रक्रिया में अनेक तब्दीलियां आई है। नवीन अनुसंधानों और व्यवहार शास्त्र द्वारा विकसित और परीक्षित शिक्षा प्रदान करने की अनेक कारगर

युक्तियों के फलस्वरूप लेखन प्रक्रिया में काफी सुधार हुआ है । पर्यावरण के लिए लेखन के फलस्वरूप शिक्षक द्वारा बच्चों को पढ़ाने के लिए उपयोग में लाई जा रही विभिन्न शैलियों और तरीकों में भी वृद्धि हुई है । सिखाई गई बातों को पुन: दोहराने वालों के रूप में बच्चों को देखने की परम्परागत पत्रिका संपादन प्रथा से हटकर उन्हें सीखने के इच्छुक व्यक्तियों और नई सूचनाओं और जानकारी के अन्वेषकों के रूप में देखा जा रहा है । पर्यावरण के लिए लेखन के कारण शिक्षा में अब शिक्षक द्वारा दिए गए व्याख्यानों या श्याम-पट्ट पर लिखी गई पंक्तियों से ही अर्थ नहीं लगाया जाता है, नहीं उसे एक निर्देशात्मक उद्यम ही माना जाता है ।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के अनुरूप यह अपेक्षाकी गई है कि बेहतर ज्ञान, शिष्टाचार, जीवन मूल्य व कुशलता संपन्न भावी नागरिक शिक्षण के माध्यम से पर्यावरण नागरिकता का यथेष्ट अर्थ समझ सकें । इस उद्देश्य से पर्यावरण के लिए लेखन ने बदलते समाज के साथ सामंजस्य स्थापित कराने में महती भूमिका का निर्वाह किया है । यही कारण है कि आज बड़े पैमाने पर यह प्रयास हो रहा है कि विद्यालयों के पाठ्यक्रमों का वैज्ञानिक दृष्टि से निरीक्षण किया जाए । इसी प्रकार शिक्षण विधियों को भी जाँचा जा रहा है । इसी उद्देश्यपरक लेखन के कारण आज शिक्षण के इस नए दृष्टिकोण के अंतर्गत विद्यालयी स्तर पर पर्यावरण को काफी महत्व दिया जा रहा है ।

9.1 प्रस्तावना

जनसंख्या के बढ़ते हुए दबाव, औद्योगिक विकास, खनिज दोहन, कृषि विस्तार, धरती के गलत उपयोग, धनोपार्जन की हविश और पेड़ों की बेतहाशा कटाई के कारण सम्पूर्ण देश में प्राकृतिक संतुलन बिगड़ जाने से पर्यावरणीय संकट के बादल मंडरा रहे हैं । विश्व की प्राचीनतम पर्वत श्रृंखला अरावली से राजस्थान प्रदेश को प्रतिवर्ष अकाल की विभीषिका का मुकाबला करना पड़ता है । संकट हमारे बहुत करीब आ चुका है । वन क्षेत्र घटते-घटते राजस्थान के कुल क्षेत्र का 9 प्रतिशत रह गया है जिसमें लगभग 3 प्रतिशत क्षेत्र में ही घने वन हैं ।

9.1.1 पर्यावरण के लिए लेखन की आवश्यकता

प्रकृति की असीम उदारता से हम वंचित हो गए हैं । ईधन एवं चारे तथा इमारती लकड़ी की बढ़ती हुई आवश्यकता से वन संपदा घट रही है, जल संकट गहरा रहा है, वन समाप्त हो रहे हैं और बंजर भूमि बढ़ती जा रही है । प्रदेश का दो तिहाई भाग मरूस्थल है, अरावली की पहाड़ियां नग्न होती जा रही है । वैज्ञानिकों के अनुसार शनै: शनै: रेगिस्तान पसरता जा रहा है ।

उक्त पंक्तियां पर्यावरण के लिए लेखन की आवश्यकता को स्वत: प्रतिपादित करती है । उर्जा के अनेक वैकल्पिक साधनों का विकास हो जाने के बावजूद भी ग्रामीण जनता आज भी जलाऊ लकड़ी के लिए वृक्षों पर निर्भर है । ग्रामीण क्षेत्रों में लकड़ी की खपत को देखते हुए खाद्य एवं कृषि संगठन के विशेषज्ञों ने यह आशंका जाहिर की है कि यदि समय रहते वनों का विकास एवं संरक्षण नहीं किया गया तो इक्कीसवीं सदी में प्रवेश करने के समय हमारे पास आटा तो होगा लेकिन उसे पकाने के लिए ईधन नहीं होगा । पर्यावरण के लिए लेखन की आवश्यकता विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं को उजागर कर उनके समाधानों की दिशा में एक सशक्त कदम के रूप में स्वीकार की जा सकती है ।

हमारे देश में प्रति वर्ष लाखों टन लकड़ी केवल चूल्हा जलाने के लिए काट ली जाती है। उद्योग, कृषि तथा आबादी में वृद्धि के कारण भी वनों की अंधाधुंध कटाई हुई है जिसके फलस्वरूप पर्यावरण का संतलन बिगड़ने के साथ साथ ऊर्जा संकट बढ़ गया है। समय पर वर्षा नहीं होती, अकाल पड़ते हैं, प्रचण्ड आंधियाँ चलती है और कुओं का जलस्तर नीचे चला जाता है।

9.1.2 पर्यावरण : जीवन का यथार्थ

पर्यावरण के लिए लेखन आज इसीलिए भी आवश्यक है कि लोग यह जान सके कि पर्यावरण जीवन का एक यथार्थ है, फैशन नहीं। हमारी मिट्टी, जल, वायु और शांति जब प्रदूषण रहित रहेगी तब ही भारत का नागरिक स्वस्थ रह सकेगा अन्यथा प्रदूषण के साथ उसका जीवन भी क्षण प्रतिक्षण क्षीण होता जाएगा। राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर पर्यावरण की गुणात्मकता हेतु सार्वजनिक चिन्तन आरंभ हो चुका है। जनसंख्या विस्फोट, विकास की तीव्र गति एवं प्रदूषण से सामान्य जन उद्वेलित हैं। तीव्र गति से होने वाला औद्योगीकरण, नगरीकरण, खनिज दोहन, ईंधन की मांग पूर्ति हेतु वृक्ष कटान एवं भू - क्षरण से शस्य- श्यामला धरती का अस्तित्व तेजी से घट रहा है। आज प्रश्न केवल 'रोटी, कपड़ा और मकान' ही नहीं वरन हमारी मूल आवश्यकताओं के लिए ताजी हवा, निर्मल जल, वनस्पति व वन्य जीवों का प्राकृतिक सन्तुलन नितान्त आवश्यक है। प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन द्वारा उत्पादन बढ़ाकर पाश्चात्य जीवन प्रणाली एवं मूल्यों की अंधी दौड़ सर्वत्र देखने को मिलती है। परन्तु क्या यह भारतीय संस्कृति एवं परंपरागत जीवन पद्धति को झुठलाकर, हम खुली अव्यवस्था एवं असामान्य परिस्थितियों को निमंत्रण नहीं दे रहे हैं ?

पर्यावरण के लिए लेखन की उपादेयता का सामान्य शब्दों में अर्थ होता है जीवन-यापन के स्तर को ऊपर उठाना, व्यावहारिक जीवन में आने वाली कठिनाइयों को वैज्ञानिक एवं युक्तियुक्त उपाय करना। प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक संसाधनों का स्पष्ट ज्ञान होना। मानव द्वारा धरा के असंतुलित शोषण के विपरीत प्रकृति एवं सांस्कृतिक संसाधनों का स्पष्ट ज्ञान होना। मानव द्वारा धरा के असंतुलित शोषण के विपरीत प्रकृति द्वारा मानव के बदलने की भावना से कार्य करने की प्रवृति पर मानव की सोच या विचारधारा से ही पर्यावरणीय प्रदूषणों का प्रार्दुभाव संभव हो सका है। पर्यावरणीय लेखन के माध्यम से मानव को अपने दु:ख के कारणों का ज्ञान होगा। अत: कहा गया है - 'विद्या ददाति विनयम्' अर्थात् विद्या विनय सिखाती है।

9.2 पर्यावरण- क्या समाचार है ?

समाचारपत्रों पर निगरानी रखना, समाचार बुलेटिनों का संकलन, समाचार वाचन, न्यूज़लेटर आदि निकालना और समाचारपत्रों को रचनाएं भेजना ऐसी कुछ रोचक गतिविधियाँ है जिन्हें विद्यालय में पढ़ने वाले बच्चे कर सकते हैं। ये गतिविधियाँ बच्चों में नियमित रूप से पढ़ने की आदत डालने के अलावा उनकी लेखन कुशलताओं को भी विकसित करेगी।

बच्चे दूरदर्शन और आकाशवाणी से समाचार बुलेटिनों पर भी निगरानी रख सकते हैं। ऐसे दूरदराज गाँवों में जहाँ अखबार नियमित रूप से नहीं पहुँचते, बच्चे पुराने अखबारों का उपयोग कर सकते हैं ?

यहाँ इन गतिविधियों को विद्यालय में आयोजित करने के लिए कुछ सुझाव दिए जाते हैं -

1. समाचार की पहचान	2. साप्ताहिक समाचार बुलेटिन
3. समाचार वितरण	4. संपादक के नाम पत्र
5. प्रेस की ताकत	6. प्रतियोगिताएं और पुरस्कार

9.2.1 समाचार की पहचान

प्रत्येक विद्यार्थी से किसी एक अखबार को नियमित रूप से ध्यानपूर्वक पढ़ने और प्रतिदिन उसमें छपे पर्यावरण संबंधी रिपोर्ट, रूपक, लेख, चित्र या विज्ञापन को कलम या पैंसिल द्वारा चिन्हित करने को कहें । आपको समझाना होगा कि पर्यावरण शब्द का व्यापकतम अर्थ क्या है । जब उनके घर के अन्य लोग अखबार पढ़ चुके हों, वे इन चिन्हित हिस्सों को काट लें और अखबार के आकार के किसी कागज की शीट पर चिपका लें । (वे पुराने अखबारों पर भी इन्हें चिपका सकते हैं) । इन कतरनों को वे तिथि अनुसार या विषयानुसार संकलित कर सकते हैं ।

कतरनों को चिपकाते समय उन्हें उनके द्वारा रोज पढ़े जाने वाले अखबार की ले-आउट का अनुसरण करने को कह सकते हैं । उनके द्वारा चिपकाए गए पृष्ठ को कोई नाम भी दिया जा सकता है (जैसे अमुक विद्यालय पर्यावरण समाचार या बुलेटिन आदि) और इन्हें विद्यालय के नोटिस बोर्ड पर प्रदर्शित किया जा सकता है ।

9.2.2 साप्ताहिक समाचार बुलेटिन

'समाचार पहचानो' गतिविधि पर आधारित एक अन्य गतिविधि भी विद्यार्थी कर सकते हैं। यह है इनमें से समाचार छांटकर एक साप्ताहिक समाचार बुलेटिन तैयार करना और इसे सप्ताह के किसी दिन जैसे सोमवार की सुबह की सभा में पढ़ कर सुनाना । इसे बारी-बारी से किया जा सकता है ताकि प्रत्येक विद्यार्थी को बुलेटिन तैयार करने और पढ़ने का मौका मिले ।

विद्यार्थियों की आयु को ध्यान में रखते हुए बुलेटिन निम्नलिखित तीन विधियों में से किसी एक के अनुसार संकलित किया जा सकता है -

1. केवल शीर्षकों का उल्लेख करना (यदि ये अर्थ की दृष्टि से पर्याप्त हों) ।
2. प्रत्येक समाचार का शीर्षक और प्रथम वाक्य या पैरा का उल्लेख करना, और
3. प्रत्येक समाचार का सार देना और इन्हें महत्व के अनुसार क्रम में लगाना ।

9.2.3 समाचार वितरण

प्रथम दो गतिविधियों को ही आगे बढ़ाते हुए, विद्यार्थियों को उनका अपना पर्यावरण डाइजेस्ट तैयार करने को प्रोत्साहित किया जा सकता है । अलग-अलग विद्यार्थी अलग-अलग भाषाओं में अलग-अलग पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ रहे होंगे । पाँच से दस विद्यार्थियों का एक संपादकीय गुट बनाइए । यह गुट महीने में एक बार एकत्र हो कर 'समाचार पहचान' गतिविधि के लिए बनाए गए समाचार पृष्ठों और समाचार बुलेटिन का निरीक्षण करेगा । इसके अलावा वह अन्य विद्यार्थियों से लेख, चित्र, व्यंग्य- चित्र, फोटोग्राफ, रूपक, लेख आदि आमंत्रित कर सकता है । इनमें से श्रेष्ठ रचनाओं को चुनकर वह एक न्यूजलेटर निकाल सकता है । यह हस्तलिखित, टंकित और साइक्लोस्टाइल किया हुआ, फोटोकॉपी किया हुआ या मुद्रित हो सकता है । यह आपको उपलब्ध सुविधाओं पर निर्भर करता है । यह न्यूजलैटर

चौमासिक, छः मासिक या वार्षिक हो सकता है और इसे कोई नाम दिया जा सकता है जैसे अमुक विद्यालय पर्यावरण न्यूज़लैटर ।

जब हमारे नेटवर्क के अनेक विद्यालय इस गतिविधि को करने लग जाएंगे, तो इन प्रकाशनों को वे एक दूसरे के पास भेज सकते हैं । चूंकि इनमें विद्यालय की गतिविधियों के बारे में जानकारी तथा अन्य स्थापित घटनाओं की रिपोर्ट आदि भी होगी, इससे रोचक और उपयोगी सूचनाओं का आदान-प्रदान होगा ।

9.2.4 संपादक के नाम पत्र

विद्यार्थियों को उनके द्वारा पड़े जाने वाले अखबारों को लिखने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है । वे संपादक के नाम लिखे गए पत्रों से शुरूआत कर सकते हैं । पर्यावरण संबंधी किसी समाचार को पढ़ते वक्त वे उनमें मौजूद गलतियों को खोजें (यों वे अखबार को अधिक ध्यान से भी पढ़ने लगेंगे)। जब भी कोई गलती उनकी पकड़ में आए, तो वे संपादक को लिखकर इस गलती की ओर उसका ध्यान आकर्षित करें । ऐसे पत्रों के प्रकाशित होने की काफी संभावना रहती है । विद्यार्थी अखबार में छपे पत्रों को ध्यानपूर्वक पड़े और उन्हीं के जैसा अपना पत्र लिखें । एक पत्र छप जाए तो विद्यार्थी अत्यधिक खुश होंगे और इस गतिविधि को बड़े उत्साह से हाथ में लेंगे । ये पत्र किसी रिपोर्ट आदि पढ़ते वक्त उनको याद आनेवाली रोचक घटनाओं, तथ्यों आदि से संबंधित हो सकते हैं । वे अतिरिक्त जानकारी या अपनी राय भी पत्रों में व्यक्त कर सकते हैं ।

9.2.5 प्रेस की ताकत

एक बार विद्यार्थियों में अखबार पढ़ने और उसके लिए लिखने की आदत पड़ जाए, उन्हें उनके विद्यालय में हो रहे कार्यक्रमों (पर्यावरण दिवस के कार्यक्रमों आदि) पर संक्षिप्त रिपोर्ट, अखबारों के लिए लिखने को कह सकते हैं । वे उनके अड़ौस-पड़ौस की घटनाओं या समस्याओं पर या किसी विशेष समस्या या घटना पर भी ताजा समाचार एकत्र कर रिपोर्ट बना कर अखबारों को भेज सकते हैं । अधिकांश समाचारपत्रों और पत्रिकाओं में बच्चों की ऐसी रचनाओं के लिए स्थान सुरक्षित रखा जाता है । यदि इनमे से कोई रचना किसी बड़े अखबार में छप जाए तो इन समस्याओं का समाधान अधिक जल्दी हो जाएगा । (बहुत दिनों से पड़ा हुआ कूड़ाकरकट रातों रात साफ हो जाएंगा जब उस दिन के अखबार के प्रथम पृष्ठ पर उसका एक फोटोग्राफ छप जाए) यों विद्यार्थी समझ जाएगे कि अच्छे नागरिकों की हैसियत से वे समाज की भलाई के लिए कैसे प्रेस की ताकत का उपयोग कर सकते हैं ।

9.2.6 प्रतियोगिताएँ और पुरस्कार

विद्यार्थियों को मन लगाकर इन गतिविधियों में भाग लेने को प्रोत्साहित करने के लिए प्रतियोगिताएं आयोजित की जा सकती है । कक्षा को दो -तीन समूह में बांटा जा सकता है । इसी प्रकार विद्यार्थियों द्वारा प्रेस में छपवाई गई रचनाओं में तीन श्रेष्ठ रचनाओं को पुरस्कृत किया जा सकता है ।

9.3 पर्यावरण से तात्पर्य

9.3.1 पर्यावरण का अर्थ -

'पर्यावरण' शब्द का भिन्न-भिन्न लोग भिन्न-भिन्न अर्थ लगाते हैं । विद्यार्थियों से पर्यावरण संबंधी समाचार एकत्र करने को कहने से पहले हमें स्पष्ट करना चाहिए कि जब हम पर्यावरण शब्द का प्रयोग करते हैं तो उसके व्यापक अर्थ से हमारा क्या आशय होता है ? इसमें सामाजिक, सांस्कृतिक और भौतिक (प्राकृतिक और मानव निर्मित) पर्यावरण शामिल हैं ।

9.3.2 पर्यावरण के अधीन विषय

यहाँ हम पर्यावरण के अधीन आने वाले विषयों की एक सूची देते हैं, जो अखबारों में पर्यावरण संबंधी समाचार खोजने में सहायक हो सकती है ।

भूमि - मिट्टी का अपरदन, जमीन में खारापन आने की समस्या, पानी का जमीन पर खड़े होने से होने वाली क्षति, गलत कृषि प्रक्रियाओं से भूमि की उर्वरता में आने वाली कमी, भूमि का कुप्रबन्ध, सिंचाई की समस्याएं, रेगिस्तान का फैलना ।

पानी - पानी का प्रदूषण, नदियों का प्रदूषण, प्रदूषण नियंत्रण और इसमें सरकार की भूमिका, गंदे पानी का परिष्करण ।

वन - अत्यधिक चराई की समस्या, पेड़ों का कटना, जलाने की लकड़ी की कमी, जन आन्दोलन, वनों पर अतिक्रमण, पेड़ों के कटने के कुप्रभाव, सामाजिक वानिकी कार्यक्रम ।

बांध - सिंचाई, बिजली उत्पादन, बाढ़ नियंत्रण, प्राकृतिक वास का विनाश, बाँध और बीमारियाँ, परिस्थितिकी का विनाश, बाँध और भूकम्प, बाँधों द्वारा लोगों का विस्थापित होना ।

वायुमंडल - वायु प्रदूषण, ताप बिजलीघर, उर्वरक कारखाने, कपड़ा मिलें, यातायात, मुख्य नगरों में वायु प्रदूषण की स्थिति, प्रदूषण नियंत्रण के कानून, पौधे और वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, कार्बन डाइआक्साइड का जलवायु पर प्रभाव ।

प्राकृतिक वास - शहरी समस्याएँ, आवास और झोपड़-पट्टियाँ, पानी की सप्लाई, शहरी यातायात, सड़क दुर्घटनाएँ, ग्रामीण समस्याएँ, ग्रामीण आवास, गाँवों में पानी की सप्लाई, गाँवों में शौचालय का अभाव और संबंधित गंदगी, सरकारी योजनाएँ ।

मनुष्य - देशज प्रौद्योगिकी, खानाबदोश लोग, यांत्रिकीकरण और बेरोजगारी, आदिवासी लोग, उद्योगीकरण, शरणार्थियों को बसाने की समस्या ।

स्वास्थ्य - स्वास्थ्य और गरीबी, पानी से फैलने वाली बीमारियाँ, सफाई, कुपोषण, मलेरिया, कीटनाशक और उनसे जनित बीमारियाँ, धूम्रपान और कैंसर ।

ऊर्जा - अपरंपरागत ऊर्जा स्रोत, गाँवों में ईंधन की कमी, जलाने की लकड़ी की कमी की समस्याएँ, ऊर्जा के अतिरिक्त स्रोत, बायोगैस, सौर ऊर्जा ।

वन्य जीवन - मनुष्य का वन्य जीवन और पारिस्थितिकी पर प्रभाव, संकटग्रस्त जीव, संरक्षण, परियोजनाएँ वन्यजीवों और उनके उत्पादों का व्यापार, अभयारण्यों, राष्ट्रीय उद्यानों, चिड़ियाघरों आदि की गतिविधियाँ, संरक्षण आन्दोलन, वन्यजीवन के संरक्षण के लिए समर्पित संस्थाएँ ।

उक्त सूची सर्वांगीण नहीं है ।

9.3.3 सरकारी नीति

सरकारी अनुसंधानों की रिपोर्ट, एन्वायरन्मेंटल इम्पैक्ट अध्ययन, पारिस्थितिकी विकास कार्यक्रम, पर्यावरण संबंधी सूचनाओं, पर्यावरण विभाग की गतिविधियाँ पर्यावरण विषयक लेखन के लिए आधार सामग्री उपलब्ध कराती है ।

9.4 जीवित पशुओं के प्रति पर्यावरण चेतना

जीवित पशुओं का उपयोग करते हुए बच्चों को जीवविकास सिखाने का तरीका अत्यधिक रोचक और अविस्मरणीय है । किसी भी उदाहरण की चर्चा करने से पूर्व पशुओं का उपयोग करते समय ध्यान देने योग्य बातों का सावधानीपूर्वक जान लेना आवश्यक है । उस पशु को जिसका उपयोग कर रहे हैं, सावधानीपूर्वक पकड़ना और आवश्यकता के विपरीत उस पर किसी भी प्रकार का दबाव न डाले यह अति आवश्यक है । बच्चों को सबसे पहले यह बता देना अनिवार्य है कि पशु भी उनके समान जीवित प्राणी है और उन्हें भी दर्द हो सकता है, किसी भी प्रकार की निर्दयता के कारण उन्हें कष्ट हो सकता है । अत: केवल कम से कम शक्ति का उपयोग करें । शिक्षक को इस तथ्य से भली-भांति परिचित होना चाहिए कि जिस पशु का शैक्षणिक प्रयोजन हेतु उपयोग किया जाना है । उसे पकड़्कर उसका उपयोग करने में उसे दक्ष होना चाहिए । साथ ही बच्चों के समूह द्वारा किसी प्रकार की बाधा नहीं डालनी चाहिए । यह बात बड़े पशुओं के विषय में और भी अधिक महत्वपूर्ण है । इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि उपयोग किया जा रहा पशु देख रहे बच्चों को काट न ले या खरौच न डाले । पशुओं से मनुष्यों में स्थानांतरित होने वाली बीमारियों के प्रति भी सतर्क रहना अनिवार्य है । पशु उनकी सामान्य स्थिति में हो उसी समय उनका अन्वेषण आवश्यकतानुसार किया जा सकता है, दबाव में होने पर उनका व्यवहार सामान्य नहीं रहता है ।

मछलियों से भरी जल जीवशाला एक आकर्षक सुविधा है और बच्चों को समझाने के लिए रोचक अवधारणाएँ लिए हो सकती है । उदाहरण के तौर पर पौधों और पशुओं में अन्तर्सम्बन्ध । मछली को पानी से आक्सीजन प्राप्त होती है । बच्चों से यह कहने के बाद शिक्षक पूछ सकते हैं कि 'जब जल जीवशाला में पानी की मात्रा सीमित है तो मछली लगातार आक्सीजन किस तरह प्राप्त करती रहती है । बच्चे अन्तर्चेतना के आधार पर कह सकते हैं कि पानी की सतह पर छू जाने से हवा अन्दर प्रवेश करती रहती है । शिक्षक इस हवा प्रवेश केन्द्र को पानी की सतह पर तेल छिड़ककर फिल्मनुमा तह बनाकर बंद कर सकते हैं । यह अवलोकन में पाया गया कि मछली अधिक समय बाद भी स्वयं को अप्रसन्न अनुभव नहीं करती क्यों कि जल जीवशाला में हरे पौधे विद्यमान है । किन्तु जब जल जीवशाला में हरे पौधे नहीं होते वे पानी की सतह पर हाँफती हुई आती है । हम जब सांस लेते है तो आक्सीजन ग्रहण करते है सांस छोड़ते वक्त कार्बन डाइआक्साइड हवा में छोड़ देते हैं । इससे पूर्व की अवधारणा और भी वृहद हो जाती है ।

तीन जल जीवशालाओं का उपयोग करते हुए ग्राफिक चित्रों द्वारा एक अन्य महत्वपूर्ण अवधारणा भी हो सकती है । तीन में से एक में पौधे और मछली, दूसरे में पानी और पौधे व अन्य में गन्दा पानी व पौधे हों । इन्हें अब खुली खिडकी के पास रखा जा सकता है । यहाँ यह स्पष्ट हो जाएगा कि जिस जल जीवशाला में मछलियों नहीं वहाँ मच्छरों के लार्वा दिखाई देंगे । इस पर चर्चा करने से यह स्पष्ट हो जाएगा कि मछली उसकी जीवशाला में स्थित लार्वा को खा जाती है । किन्तु जहाँ मछली नहीं है उनमें लार्वा बगैर किसी भय के रहते हैं । उस स्थान पर जहाँ अधिक मात्रा में शुद्ध पानी, पौधे और मछलियां होती है वहां किसी भी तरह मच्छर नहीं होते । लेकिन अन्य क्षेत्रों की चर्चा करने पर जैसे अधिक सूखे क्षेत्र में जहाँ स्थायी रूप से पानी एकत्रित रहता है । मच्छर गुणात्मक रूप में पाए जाते हैं । अवलोकन के बाद बच्चे यह भी सीख जाएंगे कि मच्छर गंदे पानी में क्यों पनपते हैं मछली क्यों नहीं ? अन्य अवधारणा भी समझ जाएंगे कि गन्दे पानी में पौधे क्यों मर जाते हैं ठीक मछलियों की तरह जबकि लार्वा उनमें जीवित रहने में सक्षम है ? इसका कारण लार्वा का पानी सतह पर आना है । इसके लिए जहाँ लार्वा सतह पर सांस लेने आते रहते हैं । वहां तेल छिड़ककर मोटी फिल्मनुमा तह बना देने से लार्वा के आने का मार्ग बंद हो जाएगा और शीघ्र मर जाएगे ।

टेरारिआ (स्थल जीवशाला) जल जीवशाला के समान आसानी से स्थापित की जा सकती है । यह वास्तकि जल जीवशाला ही होगी किन्तु उसमें पानी नहीं रखें । कुछ बाग छिपकली और गेको (छिपकली), छोटे सरीसृप आदि इस जीवशाला में अवलोकन हेतु अच्छे जीव हैं । इन सभी कीटभक्षियों को पकड़ने के लिए वर्षा का मौसम सर्वोत्तम है । बिच्छू, कीट, टिड्डा, शिकारी मेंटिंस और कोकरोच आदि कीटों के विषय में अधिक सीखने के लिए इनका ध्यानपूर्वक अवलोकन किया जा सकता है । यह ठीक है कि बिच्छू कीट नहीं है और काकरोच से भिन्न भी है किन्तु इनसे इन दोनों के मध्य अन्तर के विषय में बहुत सीखा जा सकता है ।

वर्षा के मौसम में अधिकांश तितलियाँ कीट के अंडों की परत और वर्षा के पौधों की वृद्धि और जहाँ अंडे स्थित हो, आदि उसकी ध्यानपूर्वक जाँच की जा सकती है । इन्हे स्थल जीवशाला में रखा जा सकता है । अंडे सेने से लेकर बाद में लार्वा बनने तक उसके व्यवहार और जब प्यूपा से अंतिम रूप से पंख निकलने पर वे युवा बनकर उड़ने लायक नहीं हो जाते बच्चे तब तक की स्थिति का सूक्ष्मता पूर्वक अवलोकन कर सकते हैं । इस बात पर पुन: स्मरण अति आवश्यक है कि तितली और कीट इल्ली अपने लिए भोजन हेतु विशेष पौधों का चुनाव करती है और नियमानुसार ऐसी ताजी पत्तियों का चुनाव करती है । जहां उसे भोजन भी मिल सके और वह अंडे भी दे सके ।

बच्चों की जिज्ञासा जागृत करने में जीव समूहों में सांप अत्यधिक आकर्षक है । किन्तु यह बात हमेशा याद रखनी चाहिए कि सांप पकड़ने में सावधानी बरतना आवश्यक है और हो सकता बच्चा सांप के खतरे को काबू न कर पाए, वे सख्ती से विषैली जातियों को पकड़ना शुरू कर दें और ऐसे मौके पर अंतिम सिरे को पकड़ने का अवसर प्राप्त हो जाए जो गलत नहीं है । घरेलू पशु इस पाठ्यक्रम के लिए अच्छे हैं और यह आश्चर्य की बात है कि उनका अधिक उपयोग नहीं होता । बच्चों को विश्वास दिलाने के लिए विभिन्न पशुओं की अधिक श्रेणियों में और उनके वर्णों में अंतर स्पष्ट करना आवश्यक है ।

पालतू पशु पकड़ने में सरल होते हैं और सभी उनके आसपास बैठकर उनका निकटता से अवलोकन कर सकते हैं । वर्गीकरण के आधार पर माँसभक्षी, कृन्तक और जीवियों की अवधारणा को

सुगमता से समझा जा सकता है । अन्य अवलोकन केन्डीयाई (कुत्ता वर्ग) और फेलियार्ड (बिल्ली वर्ग) ये एक दूसरे से कैसे भिन्न है । इस तरह के अन्य के विषय में भी यह समझा जा सकता है ।

पालतू कबूतरों के विभिन्न प्रकारों और उनकी मनुष्य द्वारा विकसित वन्य प्रजातियों से तुलना कर अवलोकन के द्वारा मूल्यांकन करने का उपाय समझा जा सकता है । यदि किसी भी तरह ऐसा हो भी कि प्राकृतिक चुनाव के स्थान पर मानवीय चुनाव की स्थिति निर्मित हो जाए तो भी समझा जा सकता है । सभी प्रकार के पालतू पशु इस अवधारणा के उपयोग हेतु उत्तम हो सकते हैं । शरीर के भागों का विशेषकृत होना पशु के जीवन की विभिन्न आवश्यताओं के अनुकूल होने से हो सकता है । इसे शिक्षक जीवित पशुओं की सहायता से स्पष्ट कर सकते हैं ।

यह सत्य है कि बड़े पशुओं को कक्षा में नहीं ले जाया जा सकता किन्तु फिर भी बच्चों को शेर और बाघ के विषय में सिखाने के लिए पहले उन्हें पालतू बिल्ली बताएं और पश्चात् प्राणी उद्यान में ले जाकर बड़ी बिल्ली अर्थात् शेर, बाघ आदि दिखाएं । जन्तु जगत के विषय में जानने के लिए अत्यधिक अवसर प्राणी उद्यान में विद्यमान रहते है । विशेष तौर पर स्तनधारी और पक्षियों के विषय में । आज यह आश्चर्य की बात है कि कुछ लोग ही विभिन्न कृंतक जीवियों के समूह के मध्य पाई जाने वाली तर और समानता को जानते है । ठीक इसी तरह पालतू पशु जैसे कि गाय, भैंस, ऊंट और उनके वन्य संबंधी हिरण, चिंकारा आदि के विषय में भी जान सकते है । शिक्षक की प्रवर्तक क्षमता केवल इस बात पर निर्भर होगी कि बच्चों की शैक्षणिक अनुभूति जीवित-पशुओं के साथ किस तरह हो सकती है ।

बोध प्रश्न - 1

1. पर्यावरण समाचार किसे कहते हैं ?
2. पर्यावरण का तात्पर्य स्पष्ट कीजिए ।
3. जीवित पशुओं के प्रति पर्यावरण चेतना कैसी होनी चाहिए ।

9.5 अर्थ-निर्णय प्रक्रिया का सिद्धान्त

9.5.1 अर्थ-निर्णय के छः सिद्धान्त

पर्यावरण-ज्ञान विस्तार हेतु अर्थ निर्णय की प्रक्रिया के निम्नलिखित सिद्धान्त हैं -

1. वर्णित वस्तु का व्यक्ति के स्वभाव, अनुभव और आदर्शों से संबंध स्थापित करें ।
2. अर्थ-निर्णय (Interpretation) और सूचना विनिमय पर्यायवाची नहीं है । अर्थ-निर्णय में सूचना विनिमय भी शामिल है और वह इस पर आधारित है ।
3. अर्थ-निर्णय प्रक्रिया अनेक विशेषताओं के सम्मिश्रण से संभव होती है और उसे सिखाया जा सकता है ।
4. अर्थ-निर्णय का उद्देश्य जिज्ञासा जगाना होना चाहिए न कि शिक्षण ।
5. अर्थ-निर्णय को संपूर्ण स्थिति को स्पष्ट करना चाहिए न कि उसके एक भाग को ।
6. विद्यार्थियों के लिए अर्थ-निर्णय करते वक्त वयस्कों के लिए प्रयुक्त अर्थ-निर्णय विधियों को काम में न लाकर एक बिलकुल भिन्न रास्ता अपनाना चाहिए ।

अत: इन सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप अपनाने के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान दें -

1. सीखने की प्रक्रिया में तल्लीन हो जाने की स्थिति में विद्यार्थी अधिक अच्छी तरह सीखते हैं ।
2. एक से अधिक इन्द्रियों के उपयोग से विद्यार्थी अधिक अच्छी तरह सीखते हैं ।

यह सामान्यत: माना जाता है कि विद्यार्थी -

सुनी हुई बात का 10%

पढ़ी हुई बात का 30%

देखी हुई बात का 50%

की हुई बात का 90%

याद रखते हैं ।

3. सूचनाओं और अनुभवों से अर्थ निकालने और उनसे सीखने का प्रत्येक विद्यार्थी का अलग और कारगर तरीका होता है ।
4. नई बातें सीखने के लिए पहले से सीखी हुई बातें आधारशिला का काम करती हैं ।
5. विद्यार्थी उन बातों को अधिक सीखना चाहते हैं, जिनका उनके लिए सर्वाधिक मूल्य होता है या जिनकी वर्तमान समय में आवश्यकता होती है ।
6. जो बातें विद्यार्थी स्वयं खोज कर सीखते हैं, वे उनमें उत्साह और संतोष पैदा करती है।
7. सीखने के लिए विद्यार्थी को परिश्रम करना पड़ता है ।
8. प्रतिस्पर्धा हो तो विद्यार्थी सीखने में अधिक उत्साह दिखाएंगे ।
9. सीखी जा रही बात का महत्व समझा दिया जाए तो विद्यार्थी सीखने में अधिक रुचि दिखाएगे।
10. स्वयं के अनुभवों से विद्यार्थी सबसे ज्यादा सीखते हैं ।
11. यदि ये अनुभव प्रत्यक्ष हों तो ये अधिक महत्वपूर्ण होते हैं ।
12. पाठय सामग्री को सुनियोजित ढंग से विद्यार्थियों के सामने पेश किया जाए तो वे उसे अधिक समय तक स्मरण रखेंगे ।
13. एक ही बात को अनेक प्रकार से व्यक्त किया जाए तो समझने की प्रक्रिया को बल मिलेगा।
14. प्रश्नों के उपयोग से किसी विषय को समझाया जा सकता है ।
15. पाठ को आरम्भ करने से पहले विद्यार्थियों में आशाए जगा देने से वे पाठ की ओर अधिक ध्यान देंगे ।
16. सिखाने के लिए एक से अधिक तरीके अपनाएँ ।
17. शिक्षक किस प्रकार से विद्यार्थियों के प्रति व्यवहार करता है, यह भी सीखने में सहायक होता है ।

9.5.2 सूचना विनियम

पर्यावरण संबंधी लेखन मूलत: सूचना विनिमय और जिनके साथ विनिमय करना है । उनका शैक्षिक पारिवारिक एवं सांस्कृतिक स्तर भिन्न होता है । अत: पर्यावरण पर लिखते समय आवश्यक है कि -

1. सरल भाषा का प्रयोग करें ।
2. विद्यार्थियों के स्वभावों और रुचियों को समझ लें ।
3. शब्दों का चुनाव सावधानीपूर्वक करें ।
4. वार्तालाप को जटिल न बनाए । विद्यार्थियों की समझ के मुताबिक वार्तालाप के विषय को व्यक्त करें ।
5. बोलने की गति को धीमी और नियंत्रित रखें ।
6. हर उपयुक्त मौके पर हँसी मजाक करें ।
7. किन्तु हँसी-मजाक किसी व्यक्ति या समुदाय को लक्षित करके नहीं करना चाहिए ।
8. सुनने और समझने में जो अन्तर है, उसे समझ लें ।
9. विद्यार्थी पर अत्यधिक बोझ न डालें ।
10. विद्यार्थी को अनुकूल मानसिक अवस्था में डालकर पाठ आरम्भ करें ।
11. प्रतिपुष्टि (फीडबैक) बहुत महत्वपूर्ण है ।

9.6 समाजोपयोगी कार्य

शिक्षण का उद्देश्य न केवल विद्यार्थी को जीविकोपार्जन के लिए आवश्यक कुशलताओं से संपन्न बनाना है, बल्कि उसमें सामाजिक और पर्यावरण वास्तविकताओं के प्रति संवेदनशीलता और जागृति पैदा करना भी है । यह विद्यार्थी को एक अच्छा नागरिक बनाने के लिए आवश्यक है । इस उद्देश्य की प्राप्ति का एक माध्यम विद्यार्थी को समाजोपयोगी कार्य में शामिल करना है जिससे मेहनत करना और सीखना दोनों परस्पर संबंधी क्रिया बन जाते हैं । ऐसे कार्य उसमें आत्मविश्वास की भावना जगा कर और मन में अनेक जिज्ञासापूर्ण प्रश्न उत्पन्न कर अनायास ही जागृति उत्पन्न करते हैं । इस जागृति को इस पैमाने से आंका जा सकता है कि वह उसके परिणामस्वरूप कौन से ऐसे कार्य करता है जिन्हें समाजोपयोगी या लाभदायक कहा जा सकता है ।

9.6.1 उद्देश्य

समाजोपयोगी कार्य पर्यावरण के संतुलन की भूमिका रखते हैं अतः पर्यावरण विषय पर लेखनी चलाते समय लेखक के निम्नलिखित उद्देश्य स्पष्ट होते हैं -

1. सामाजिक परिवर्तन लाने में विद्यार्थियों की भूमिका को समझाना ।
2. स्वयं विद्यार्थियों को उनकी इस भूमिका के प्रति जागरूक बनाना ।
3. प्रत्यक्ष अनुभवों से शिक्षण पाने के लाभों की और ध्यान आकर्षित करना ।

विद्यार्थी द्वारा किए जाने वाले समाजोपयोगी कार्य इस पुस्तक के अन्य कार्य सत्रों के अन्तर्गत शुरू की गई गतिविधियों पर आधारित हो सकती हैं । जैसे, क्षेत्र-भ्रमण से प्राप्त की गई सूचनाओं या समाचार संकलन से उत्पन्न जागृति के परिणामस्वरूप कोई आवश्यक पर्यावरणीय परिवर्तन लाने का कार्य वे हाथ में ले सकते हैं । उनके संसाधन (रिसोर्स केन्द्र) में किसी आवश्यक वस्तु की अनुपस्थिति उन्हें उसे प्राप्त करने की चेष्टाओं की ओर प्रेरित कर सकती है और यदि वह अप्राप्य है तो इसके कारणों का अन्वेषण वे कर सकते हैं । अवलोकन और मापन की गतिविधि के दौरान यह देखकर कि एक पौधा

स्वस्थ नहीं दिख रहा है, वे इसके कारणों को खोजने लग सकते हैं और उसका समाधान कर सकते हैं । अत: समाजोपयोगी कार्य अन्य गतिविधियों की अगली तर्कसंगत कड़ी हो सकती है ।

9.6.2 छात्रों के लिए प्रेरणा

समाजोपयोगी कार्य के कुछ उदाहरण यहाँ सुझाए जाते हैं । जिन्हें शिक्षक पहले उनके विद्यालय परिसर के भीतर कर के देखे जब ऐसे कार्यों को करने की उनकी क्षमता को विद्यार्थी व्यक्त कर दें और उनमें आत्म विश्वास बढ़ जाए तो इसी प्रकार के कार्यों को विद्यालय के बाहर उनके घरों के आसपास या समुदाय में करने को उन्हें प्रेरित किया जा सकता है । लेकिन इसमें सफलता के लिए उन्हें उचित मार्गदर्शन की आवश्यकता पड़ेगी । उन्हें बदले हुए संदर्भ के लिए उचित कार्य प्रणालियाँ विकसित करने की ओर प्रेरित करें । इन कार्यों से प्राप्त अनुभव उन्हें जिम्मेदार नागरिक बनाने में बहुमूल्य सहयोग देंगे ।

1. विद्यार्थी और पेड़

कक्षा को तीन-चार के समूहों में बांट दीजिए । प्रत्येक समूह को दस-बारह पेड़ लगाने और उसकी उस अवस्था तक देखभाल करने को कहें जब तक के स्वयं ही बढ़ने योग्य नहीं हो जाते । इन्हें वे विद्यालय के मैदान के किनारों, सड़कों के दोनों ओर, सामुदायिक जमीन या अन्य सुविधाजनक स्थलों में लगा सकते हैं । इस गतिविधि में जोर इस बात पर दिया जाना चाहिए कि विद्यार्थी पेड़ों के संरक्षण के महत्व को समझें । इस गतिविधि से पर्यावरण को हराभरा बनाने का दूरगामी उद्देश्य भी प्राप्त होता है । पेड़ लगाकर विद्यार्थी पर्यावरण को हराभरा रखने की आवश्यकता के प्रति जागरूक होंगे । प्रत्येक विद्यार्थी को एक पेड़ के परवरिश की जिम्मेदारी न सौंपकर विद्यार्थियों के समूह को पेड़ों के एक झुरमुट की देखभाल करने को कहने के पीछे तर्क यह है कि ऐसा करने से सफलता का उल्लास और असफलता की पीड़ा अनेक विद्यार्थियों में बंट जाती है । किसी पेड़ के मुरझा जाने के लिए किसी एक विद्यार्थी को जिम्मेदार नहीं होना पड़ेगा और इससे 'हारने' से जुड़े हुए अपराध भावना से वे बच जाएंगे । इसके साथ ही एक-दूसरे से मिल कर कार्य करने के महत्व से भी वे परिचित हो जाते हैं । ऐसी गतिविधियाँ प्रकृति या समुदायी स्तर पर भी उतनी ही सफलता से किया जा सकता है । यदि पेड़ लगाने के लिए जमीन न उपलब्ध हो तो विद्यार्थी गमलों में या प्लास्टिक की थैलियों में पेड़ लगा सकते हैं । जब वे उस अवस्था में पहुँच जाए जब स्वयं ही बढ़ सके, उन्हें दूसरे स्थानों पर रोपा जा सकता है ।

इसका एक विचलन ऐसे स्थानों से पीपल के पेड़ों को उखाड़ कर जहाँ वे पूर्ण आकार को नहीं प्राप्त हो सकते, (जैसे भवनों की दीवारें) अन्य स्थानों में रोपना हो सकता है । एक अन्य विचलन किसी बंजर भूमि को पुन: हरा-भरा बनाना है । यह उस भूमि में पशुओं के चरने या मनुष्यों द्वारा वनस्पति एकत्रित करने पर विद्यार्थियों द्वारा रोक लगा कर किया जा सकता है । इसे आरम्भ करने से पहले यह निश्चित कर लें कि इस भूमि में पौधों की जड़ें मौजूद है ।

2. खड़े हुए पानी के जलकुण्डों को भरना

विद्यार्थियों से उनके विद्यालय और घर के आसपास ऐसे कुण्डों का पता लगाने को कहे जिनमें पानी इकट्ठा होकर समुदाय के स्वास्थ्य के लिए खतरा बनता है । उदाहरणार्थ सड़कों के गड्ढे जिनमें पानी भर जाता है और मच्छरों के बढ़ने के लिए अनुकूल परिस्थिति प्रदान करता है । अत: इनमें से पानी को बहा देने की विधि विद्यार्थी ढूंढ निकालें । इन गड्ढों को भरने का कार्य भी वे हाथ में लें

। यदि यह संभव न हो तो वे यह पता लगाएँ कि पानी कहाँ से आता है और वहां बाड़ लगा दें । वे गड्ढे से नालियाँ निकाल सकते हैं ताकि पानी उनके जरिए बह जाए और गड्ढे में जमा न हो सके।

नमीयुक्त इलाकों में पेड़ उगाकर जमीन की नमीयता को कम करना इस गतिविधि का विचलन हो सकता है । तरीयुक्त इलाकों मे जहाँ अक्सर पानी इकट्ठा हो जाता है, केले के पेड़ उगाए जाते है जो पानी को सोख लेते है ।

3. चारा उगाना

किसी मैदान में उग रही घास को काटकर पशुओं को खिलाया जाए तो उस मैदान में चराकर उससे छ: गुना अधिक पशुओं को जीवित रखा जा सकता है । इस तथ्य को समझने के लिए विद्यार्थी समान क्षेत्रफल के दो मैदानों में से एक से घास काट कर मवेशियों को खिलाएँ । दूसरे में मवेशियों को चरने के लिए मुक्त कर दें । अंतर को स्वयं देखें । इस तथ्य को अब वे समुदाय के अन्य लोगों को समझाने की विधि खोजे । इसका एक विचलन यह हो सकता है कि गाँव के चारागाह के एक हिस्से पर चारा उगाने के लिए घेरा लगा दें । इससे घास काट कर पशुओं को खिलाएँ ।

9.6.3 कूड़ा-कर्कट का उपयोग

कक्षा को उस स्थान पर ले जाइए जहाँ विद्यालय का कूड़ा-कर्कट फैंका जाता है । वे जब कूड़े को दो श्रेणियों में बाँट लें - एक, ऐसी वस्तुओं को जो कि प्राकृतिक रूप से नष्ट हो जाती हैं और दूसरी ऐसी वस्तुओं को जो प्राकृतिक रूप से नष्ट नहीं होती । वे इन्हें इस प्रकार भी विभाजित कर सकते हैं - 1. पुन: उपयोग में लाई जा सकने वाली वस्तुएँ, 2. पुन: उपयोग में न लाई जा सकने वाली वस्तुएँ।

इन दोनों प्रकार की वस्तुओं को सुचारू रूप से ठिकाने लगाने के तरीके छात्र खोजें । वे यह भी सोच कर बता सकते हैं कि फेंकी जानी वाली अधिकांश वस्तुओं का पुन: उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है । ऐसा करने में प्रदूषण भी न्यूनतम होना चाहिए । अपने घर और समुदाय के कूड़ा कर्कट के लिए भी ऐसी विधियाँ वे सुझाएँ । उन्हें नगरपालिका के कार्यों के बारे में बताएँ और समझाएँ कि पर्यावरण को स्वच्छ रखने के उसके प्रयत्नों में वे किस प्रकार योगदान दे सकते हैं । वे प्राकृतिक रूप से नष्ट होने वाली वस्तुओं को जमीन में गाड़कर उनसे उपयोगी खाद उत्पन्न कर सकते हैं । इससे संबंधित एक अन्य अभ्यास विद्यार्थियों को शहर के विभिन्न भागों में ले जाकर दिखाना है कि किस-किस प्रकार की वस्तुएँ फैंकी जाती है और उनका पुन: उपयोग किस प्रकार किया जाता है ।

9.7 पत्रकार, प्राकृतिक प्रकोप और पर्यावरण

पत्रकार संभवत: इस विचार को भी स्वीकारने के इच्छुक होंगे कि सैंकड़ों पूर्वनिर्मित घरों में शरण लेना मूल्य प्रभावी चैरिटी है जो चक्रवातों के बाद होने वाले उत्पीड़न को मुक्त करेगा । फिर भी किसी समाज में राहत परिचालन की सार्थकता संबंधी कठिन प्रश्न पूछने योग्य हैं । यद्यपि महत्वपूर्ण प्रश्न है फिर भी यह पूछे नहीं जाते । वे अपने लेखों में ऐसे प्रयासों को व्यापक स्थान दे सकते हैं कि-

1. प्राकृतिक प्रकोप विशेष रूप से तृतीय विश्व में मानव जीवन का एक बेजोड़ अंग है । उनकी भीषणता से लोगों के संबंध अपने पर्यावरण से, अपनी सरकार से और उनके समाज की अन्य संस्थाओं से प्रभावित होते हैं।

2. प्रतिदिन की मानवीय क्रियाएँ-खेती बाड़ी, ईंधन की लकड़ी, कटाई, गृह निर्माण, आवासीय स्थलों का चयन- उनकी भूमि को कम या अधिक आपदाशील और लोगों को कम या अधिक सुरक्षित बना सकती है ।
3. प्रचलित प्रकोप राहत प्रकोपों के कारण उत्पन्न मानवीय कष्टों को कम करने में सर्वाधिक मूल्य प्रभावी दक्ष या सर्वाधिक उदार नहीं हो सकते । कुछ परिस्थितियों में तो यह भलाई की अपेक्षा हानि पहुँचा सकते हैं ।
4. जैसे-जैसे लोग आर्थिक तथा राजनीतिक दृष्टि से उन्नति करते हैं, प्राकृतिक प्रकोपों से उनकी असुरक्षा की सम्भावना घट जाती है । प्रकोप संबंधी संगठन विकास से संबंधित होने चाहिए।

यदि इन विचारों में कोई बड़ा सत्य निहित है, तो प्राकृतिक प्रकोपों में कार्यरत एजेन्सियों को अपनी परिचालन विधियों पर पुनर्विचार करना चाहिए । तो भी अपनी भूमि को अधिक सूखा तथा बाढ़ग्रस्त बनाने में मानवीय क्रियाओं पर बल देने और इस प्रकार अपने उत्पीड़न में वृद्धि से हमारा आशय यह नहीं है कि प्रकृति जिसके विषय में पहले से कोई भविष्यवाणी नहीं की जा सकती, इन प्रकोपों को लाने में कोई मुख्य भूमिका अदा नहीं करती ।

क्योंकि लोग खतरनाक भूमि पर खतरनाक झौंपडों में रहते हैं, इसलिए भूकम्पों के कारण मृत्यु दर जितनी होनी चाहिए उससे अधिक होती है । इस बात पर ध्यान केन्द्रित करने से हमारा आशय यह नहीं है कि भूकम्पों से सर्वाधिक व्यवस्थित समाजों में भी अप्रत्याशित रूप से लोगों के मरने से हम असहमत है ।

इस बात पर महत्व देने से कि चक्रवात प्रकोप तृतीय विश्व के समाजों के जीवन में अवश्यम्भावी घटना है-से हमारा आशय यह सुझाव देने से नहीं है कि उत्तर के मौसम वैज्ञानिकों की जो कि निम्न दवाब वाले क्षेत्रों तथा उनमें होने वाली गतियों का अध्ययन करते है, चक्रवातों का भली-भांति सामना करने के लिए समाजों की सहायता करने में कोई भूमिका नहीं है । उनके कार्य ने विभिन्न समाजों में लाखों व्यक्तियों की जीवन-रक्षा में सहायता की है, जिनके पास चेतावनी प्रसारण के लिए परिवहन तथा संचार प्रणालियाँ उपलब्ध हैं ।

उत्तरी संगठनों ने तृतीय विश्व के प्रकोप पीड़ितों के लिए कितने राहत प्रयास किए हैं, इसकी व्याख्या में ये अपर्याप्त रहे हैं और कभी- कभी गलत भी, परन्तु इससे हमारा यह अर्थ नही है कि उनके राहत कार्यक्रमों की अनदेखी कर दें जिनसे कि बहुत सी जाने बच सकी है और कष्ट कम हुए है । विदेशी राहत सहायता महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है । ऐसी राहत अल्प अवधि में पीड़ितों के कष्टों की गंभीरता को कम करने की एक मात्र विधि हो सकती है । यह ऐसी विपत्तियाँ है जिनमें सशस्त्र मुठभेड़, बहुधा तथाकथित प्राकृतिक प्रकोपों के साथ मिलकर बहुतों को शरणार्थी बना देती हैं । विशेषरूप से ताजा प्रसंगों में अफ्रीका में ऐसे प्रकोप अधिक बारम्बारता में हो रहे हैं । इस प्रकार के प्रकोपों से मुक्ति दिला पाना सुरक्षा समस्याओं के कारण विशेष रूप से कठिन हो सकता है, परन्तु बहुत से सन्दर्भो में यह राहत ही पीड़ितों को जीवित रखने की एक मात्र आशा है जब तक वे आत्म-निर्भर न बन जाए।

बोध प्रश्न - 2

1. अर्थ-निर्णय की प्रक्रिया के क्या सिद्धान्त है ?

2. सूचना विनिमय से क्या आशय है और यह किस प्रकार किया जाना चाहिए ?
3. समाजोपयोगी कार्य का उद्देश्य क्या होता है ?
4. पर्यावरण संरक्षण मेंपत्रकारों की भूमिका स्पष्ट कीजिए ?

9.8 पर्यावरणीय लेखन से गुणात्मकता प्रसार

पर्यावरणीय लेखन के माध्यम से धर्म, राष्ट्र, समुदाय, वर्ग, क्षेत्र, सीमाएँ, स्वयं को संवैधानिक अधिकार एवं उत्तरदायित्व, राष्ट्र में व्याप्त भ्रष्टाचार व विषमताओं का ज्ञान भी भौगोलिक अवयवों के मध्य प्राप्त किया जा सकता है । सांस्कृतिक पर्यावरण प्रदूषण रूपी वैज्ञानिक उन्नति में अपने ज्ञान के माध्यम से सीमाओं का समाज के आक्रांताओं से भी मुक्ति प्राप्त कर स्वाभिमान से जीया जा सकता है । पर्यावरणीय लेखन के माध्यम से भू-राजनीतिक सीमाओं की रक्षा राष्ट्र की एकता और अखंडता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका को समझा जा सकता है ।

पर्यावरण लेखन से स्कूलों एवं कालेजों में पर्यावरणीय चेतना जागृत कर प्रत्येक मानव को एक दूसरे के सन्निकट लाकर पर्यावरण की महत्ता में गुणात्मक विकास किया जा सकता है । मानव अपने पर्यावरणीय संतुलन में विनम्र स्वभाव के कारण ही अहं भूमिका निभाता है जैसे आदिवासी वन्य जीव एवं जन्तुओं का उपयोग निश्चित सीमा तक ही करते हैं, जिससे पर्यावरणीय संतुलन बना रहे।

9.9 सारांश

पर्यावरण के लिए लेखन आज के समय की महती आवश्यकता है । पिछले कुछ वर्षों में पर्यावरण संबंधी अंतरराष्ट्रीय मसलों को लेकर विकासशील देश संगठित हुए हैं । इनकी एकता का चरमोत्कर्ष रिओ-द-जेनेरियो में पृथ्वी सम्मेलन और जैव विविधता समझौते, जलवायु परिवर्तन समझौते और मांट्रियल प्रोटोकोल पर हस्ताक्षर के रूप में देखा गया है । आज विश्व बैंक, संयुक्त राष्ट्र विकास बैक आदि अंतरराष्ट्रीय कोषों से किसी विकास परियोजना के लिए वित्तीय सहायता के निवेदन पर तभी विचार किया जाता है जब उसके पर्यावरणीय प्रभाव का मूल्यांकन हो चुका होता है अंतरराष्ट्रीय सहायता के लिए कोई परियोजना प्रस्तुत करते समय उसके संबंध में पर्यावरणीय प्रभाव के मूल्यांकन हेतु विश्व बैंक आदि एजेन्सियों ने स्पष्ट मार्गदर्शिकाएँ जारी की हैं । भारत ने वर्ष 1977 में ही पहल करते हुए पर्यावरणीय प्रभाव के मूल्यांकन का सिलसिला शुरू कर दिया था । प्रस्तुत इकाई में पर्यावरण संबंधी समस्त जानकारी हेतु लेखन का महत्व प्रतिपादित किया गया है ताकि संप्रेषण से जुड़े व्यक्ति विशेष रूप से नागरिकों को तथा विद्यार्थियों को पर्यावरण के प्रति चैतन्य बनाने में सहयोग कर धरती को प्रदूषण मुक्त बनाने में अपनी महती भूमिका निभा सकें ।

9.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. प्राकृतिक प्रकोप : ईश्वरीय अथवा मानवीय कृत्य ? : एंडर्स वाइकमैन एवं लायड टिंबर लेक, ज्वाइंट एसिस्टेंस सेन्टर, एच 65, साउथ एक्सटेंशन 1, नई दिल्ली - 110 049
2. विद्यालयों में पर्यावरणीय शिक्षण अभिगम, पर्यावरण शिक्षण केन्द्र, अहमदाबाद
3. हमारा पर्यावरण : पर्यावरण विभाग, राजस्थान, 1995
4. प्रकृति, पर्यावरण और मानव : डा. एल. के. दाधीच, 1992
5. पर्यावरण कुछ तथ्य : डा. एल. के. दाधीच, 1996

6. एंवारमेंट डिग्रेडेशन : स्ट्रेटेजीज फार कंट्रोल, संपादन डा. एल. के दाधीच एवं डा. रीमा हूजा, आलेख पब्लिशर्स, जयपुर, 1992
7. अपना पर्यावरण : डा. एम. के. गोयल, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1995
8. संजीवनी पर्यावरण : मथुरा प्रसाद, राष्ट्रीय सेल्स एजेन्सीज, जयपुर 1998

9.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पर्यावरण के लिए लेखन क्यों आवश्यक माना गया है ?
2. पर्यावरण के लिए लेखन की उपादेयता स्पष्ट कीजिए ।
3. 'पर्यावरण के लिए लेखन से शिक्षण को नया दृष्टिकोण मिल सका है' इस कथन से आप कहां तक सहमत है ?
4. 'पत्रकारों दारा पर्यावरण के लिए लेखन से सामाजिक क्रांति संभव है' - क्या आप इस कथन से सहमत है ?
5. पर्यावरण के लिए लेखन पर एक विवेचनात्मक टिप्पणी लिखिए ।
6. अर्थ-निर्णय प्रक्रिया का पर्यावरण के लिए लेखन से संबंध स्पष्ट कीजिए ।

इकाई 10 फिल्मों के लिए लेखन

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 कथा और पटकथा का जन्म
10.3 पटकथा के आवश्यक तत्व
10.4 पटकथा लेखन के सिद्धान्त
10.5 कहानी का रूपान्तरण : अन्तर्निहित खतरे
10.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें
10.7 निबन्धात्मक प्रश्न

10.0 उद्देश्य

फिल्मों के लिए कथा और पटकथा लिखना अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है । कथा-पटकथा फिल्म निर्माण की पहली सीढ़ी है और इनके बिना किसी फिल्म की कल्पना ही नहीं की जा सकती । फिल्म निर्माण के प्रत्येक चरण में कथा-पटकथा का बेहद महत्व है और हाल के वर्षों के दौरान पटकथा लेखन का कार्य भी अनुभवी और कुशल लेखकों द्वारा किया जाने लगा है । इस इकाई का अध्ययन करने के बाद विद्यार्थी जान पाएंगे कि -

- फिल्म निर्माण में कथा-पटकथा का क्या महत्व है और ये क्यों आवश्यक है ?
- कहानी को पटकथा में परिवर्तित करने की प्रक्रिया क्या है और कहानी के रूपान्तरण में किन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है ?
- पटकथा लेखन के आवश्यक तत्व और सिद्धान्त कौन-से हैं ? और
- एक श्रेष्ठ पटकथा किसे कहा जा सकता है ?

10.1 प्रस्तावना

जैसा कि हम सब जानते हैं, फिल्म एक दृश्य माध्यम है । सिनेमा में अभिव्यक्ति के तौर-तरीके और सीमाएँ भिन्न-भिन्न हैं । सिनेमा जो कह सकता है वह अन्य कला विद्याओं की परिधि के बाहर है । सिनेमा एक दृश्य माध्यम होने के साथ श्रव्य माध्यम भी है और उसमें दोनों पक्षों का समान महत्व है । किसी फिल्मकार की सबसे बड़ी तपस्या यही है कि वह इस प्रकार अलग- अलग तत्वों का मेल कराए कि देखने वाले तक उनका संयुक्त प्रभाव पहुँच सके । यह नितान्त आवश्यक है कि प्रत्येक फिल्म ध्वनियों, दृश्यों और विम्बों को इस तरह अभिव्यक्ति करे कि वह अपने संपूर्ण रूप में दर्शकों तक पहुँचे । हालांकि सिनेमा एक कला है और कुछ समीक्षकों की निगाह में यह समकालीन अन्य सभी कलाओं से श्रेष्ठ है । मगर सिनेमा में शिल्प और कथ्य की प्रभावशीलता फिल्म की कथा पटकथा और उनमें रखे गए संवादों से जुड़ी होती है । इस लिहाज से हम कह सकते हैं कि फिल्मों के निर्माण में कथा-पटकथा का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान रहता है ।

10.2 कथा और पटकथा का जन्म

प्रख्यात फिल्मकार ख्वाजा अहमद अब्बास का मानना था कि सिनेमा कहानी कहने का नया तरीका है, जिसमें एक साथ हजारों लोगों को कहानी सुनाई जाती है । यह कहानी किसी लेखक की भी हो सकती है अथवा किसी पुस्तक या प्रकाशित कथा अथवा किसी नाटक से भी ली जा सकती है । कई बार विदेशी फिल्मों की कहानियों पर भी हमारे यहां फिल्में बनाई जाती है । लेखक अपनी कहानी अथवा विचार-सूत्र (आइडिया) को फिल्म के निर्माता अथवा निर्देशक के सामने रखता है । सब मिल कर उसकी संभावनाओं पर चर्चा करते हैं, मुख्य रूप से इस बात को लेकर कि कहानी हजारों -लाखों फिल्म दर्शकों को पसन्द आएगी या नहीं । यदि निर्माता-निर्देशक को कहानी पसंद आ जाती है और सब उस पर सहमत हो जाते हैं तो उसे पटकथा लेखक को दे दिया जाता है । पटकथा स्वयं निर्देशक भी लिख सकता है अथवा कोई ऐसा लेखक लिखता है जिसे फिल्में लिखने का काफी अनुभव हो । पटकथा लेखक कहानी को विस्तार देता है और उसे परदे पर दिखाए जाने वाले दृश्यों और क्रमों में बाँटता है । इसके बाद वह फिर निर्देशक से सलाह करता है और पटकथा तैयार करता है ।

पटकथा नाटक की तरह ही लिखी जाती है । दृश्यों का क्रम क्या होगा, कौन-कौन से पात्र आएंगे और वे क्या करेंगे, लोकेशन क्या होगा, पात्रों की वेशभूषा क्या होगी- इत्यादि सभी बातें पटकथा में लिखी जाती है ।

जब फिल्म के निर्माता अथवा निर्देशक पटकथा पर सहमत हो जाते हैं तो उसे संवाद लेखक को दे दिया जाता है, जो पटकथा में दर्शाए गए दृश्यों के अनुसार पात्रों के लिए आवश्यक संवाद तैयार करता है । कई बार कथा-पटकथा और संवाद लेखक एक ही व्यक्ति होता है । हमारे यहां कथा और पटकथा के साथ-साथ संवाद लेखन को भी पर्याप्त महत्व दिया जाता है, क्योंकि फिल्म को नाटकीय और प्रभावी बनाने में संवाद ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं ।

10.3 पटकथा के आवश्यक तत्व

हम जानते हैं कि साहित्य, सिनेमा, गीत-संगीत या अन्य ललित कलाएं अपने समय के जीवन का केवल तस्वीर मात्र नहीं होती है । वे जीवन को उन्नत और शिक्षित बनाती है और यही उनकी सामाजिक भूमिका भी है । इन ललित कलाओं को उन्नत रूप में सिनेमा ही हमारे सामने पेश करता है और यह काम एक अच्छा पटकथा लेखक ही कर सकता है । चूंकि सिनेमा एक दृश्य और श्रव्य माध्यम है इसलिए पटकथा-लेखक को पटकथा इस तरह तैयार करनी होती है कि उसमें चित्र और ध्वनि दोनों तत्व समान और प्रभावी रूप में आ जाएं । जैसे सूर्यास्त के समय का विवरण यह कुछ इस प्रकार करता है - - आसमान में धुंधलका छा गया है, सूर्य अब अस्त होने को है..... क्षितिज पर सिन्दूरी रंग.... परिन्दे अपने-अपने नीड़ की तरफ लौटते हए.... मंदिरों में आरती के स्वर..... नदियों की कल-कल और ..... इन दृश्यों अंशों में ध्वनि भी है, चित्र- भी । दोनों में से एक भी न हो तो दृश्य का पूरा प्रभाव ही उत्पन्न नहीं हो पाएगा ।

चित्र और ध्वनि के अलावा पटकथा में थोड़ा-बहु त नाटकीयता का पुट भी होना चाहिए । कहानी के सभी आवश्यक तत्वों को समेटते हु ए पटकथा को इस तरह नाटकीय बनाया जाना चाहिए कि दर्शक सिनेमाघर के भीतर पूरी तरह कहानी में खो जाए और बाद में भी वह फिल्म में अन्तर्निहित संदेश के बारे में ही विचार करता रहे । हालांकि नाटकीयता संवादों के माध्यम से उत्पन्न की जाती है मगर

पटकथा लेखक का भी इसमें महत्वपूर्ण योगदान होता है, क्योंकि दृश्यों को, कहानी को वही विजुलाइज करता है ।

दृश्यों में नाटकीयता का एक उदाहरण, वी. शांताराम निर्मित 1950 में प्रदर्शित **फिल्म 'दहेज से - - - -**

पृथ्वीराज कपूर पिता की, ललिता पवार सास की और जयश्री पुत्री की भूमिका में है । बेटी जयश्री के ससुराल वालों की मांग पूरी करने के लिए पिता अपना सब कुछ बेच डालता है और वस्तु आभूषण लेकर बेटी के ससुराल पहुँचता है । सास दरवाजा तोड़ देती है और बहु गिरता दरवाजा रोकने के प्रयत्न में घायल हो जाती है । इसी समय पिता घर में प्रवेश करता है और बेटी का सिर अपनी गोद में रख कर रूधे गले से कहता है- - - - 'बेटी' मेरी गैरतदार बेटी'...... वाकई तूने खानदान का नाम रोशन कर दिया । बेटी देख, तेरे बाप ने दुनिया भर की चीजें दहेज में दी है. ।' नायिका कठिनाई से आंखें खोलती है और कहती है - 'पिताजी....... आप एक चीज देना भूल गए ।'

'वह क्या?'

'कफन...... ।'

यह कह कर वह प्राण त्याग देती है ।

इस तरह के नाटकीयता प्रभाव वाले दृश्य पटकथा लेखक ही कहानी में जोड़ सकता है । दर्शकों पर इनका अच्छा प्रभाव पड़ता है और कहानी के साथ उन्हें रिश्ता जोड़ने में सुविधा हो जाती है ।

पथेर पांचाली : पटकथा के अंश

विद्यार्थियों की सुविधा के लिए यहां हम प्रख्यात फिल्मकार सत्यजित राय की अंतरर्राष्ट्रीय स्तर पर चर्चित फिल्म 'पथेर पांचाली' की पटकथा के कुछ अंश दे रहे हैं । इससे हमें पटकथा के सबल तत्नीकी पक्ष की जानकारी तो मिलती ही है, साथ ही दृश्यों और ध्वनियों के महत्व का पता भी चलता है ।

दिन का समय, बरामदा, एक शीशे के सामने अपू अपनी नाक के नीचे कागज की मूंछें चिपकाने की कोशिश कर रहा है फिर जैसे ही वह चमकीले कागज से बना हुआ मुकुट सिर में रखता है वैसे ही मूंछे नीचे गिर जाती है । पृष्ठभूमि में जात्रा का संगीत चल रहा है । सर्वोजया नहाकर घर में आ रही है - और दरवाजे के बाहर से ही आवाज देती है । जात्रा संगीत रुक जाता है .....

सर्वोजया : दुर्गा दुर्गा ! जाके देख तो बछड़ा कहां भाग गया ?

जैसे ही सर्वोजया भीतर आती है । अपू उसके पीछे लग जाता है ...

अपू : मां मेरा मुकुट तो बांध दो ।

सर्वोजया प्यार से उसकी ओर देखती है ।

सर्वोजया : जरा रुक जा, तू तो समझता है जैसे तेरा हुकुम बजाने के अलावा मेरा कोई और काम ही नहीं है ।

इसी बीच मां की बात सुनकर दुर्गा बाहर आती है

दुर्गा : अपू ! पिशी को देखने चलोगे ?

माँ अपू के सिर पर चमकीले कागज का मुकुट ठीक से रखते हुए कहती है-

सर्वोजया : अब तुम पिशी को ही मत ढूंढते रहना । जाकर पहले बछड़े को ढूंढो ।

सर्वोजया अपू के मुकुट के धागे पर गांठ मारकर धीरे से उसके सिर को पीछे ठेलती है । मुकुट उसकी नाक पर आ गिरता है । अपू उसे फिर से सिर पर रख देता है । दुर्गा दीवार पर बने एक बड़े से छेद से भीतर आती है और अपू का मुकुट देखकर चकित होती है ।

दुर्गा (हंसते हुए) : यह क्या है ?

अचानक दुर्गा गंभीर हो जाती है और गुस्से से पूछती है ।

दुर्गा : तुम्हें यह पन्नी कहां से मिली ?

अपू अपराधी भाव से खड़ा रह जाता है । दुर्गा भागती हुई कमरे में जाती है और अपने छोटे से बक्से को खोलकर टटोलने लगती है । यह सब देखकर अपू भागने लगता है और दुर्गा उसके पीछे भागती है । वे दोनों दरवाजे और दीवार पर बने छेद पर चक्कर काटते रहते है । अपू दुर्गा से बचने की कोशिश करता रहता है आखिर में दुर्गा अपू को पकड़ ही लेती है और थप्पड़ मारती है ।

दुर्गा (धमकाते हुए) : फिर करोगे ऐसा ।

सर्वोजया यह सुन लेती है और दौड़कर बच्चों के बीच में आ जाती है ...

सर्वोजया : यह क्या हो रहा है ?... दुर्गा । .... दुर्गा ! यह क्या कर रही हो. तुमने फिर उसे मारा ।

सर्वोजया दुर्गा से छुड़ाकर अपू को उठाती है । दुर्गा अपनी सफाई में कह रही है ।

दुर्गा : उसने मेरे बक्से में से चीजें क्यों निकाली ?

सर्वोजया : क्यों न निकाले ? बड़ा कीमती बक्सा है तुम्हारा जैसे ?

दुर्गा सफाई में कह रही है ।

दुर्गा : इसने मेरी सारी पन्नियां निकाल ली ।

सर्वोजया : चुप रहो और जाकर बछिया को ढूंढ लाओ ।

सर्वोजया चली जाती है और दुर्गा अपू को घूरती रहती है ।

दुर्गा (धीमे धमकाते हुए स्वर में) : गधा ! बड़ा आया राजकुमार बनने ।

दुर्गा घर के कौने की तरफ जाती है फिर मुड़कर अपू की तरफ देखती है । अपू अपने धनुष-बाण और पन्नी के मुकुट के साथ खड़ा है । दुर्गा उसकी तरफ देखते हुए जीभ निकालती है और फिर घूमकर भाग जाती है । अपू उसके पीछे-पीछे भागता है । पृष्ठभूमि में बांसुरी पर थीम म्यूजिक चलने लगता है । डिजाल्व ।

बच्चे दौड़ रहे हैं । दूर एक मैदान में अपू दुर्गा के पीछे भाग रहा है । उसके साथ-साथ मैदान में एक बादल की छाया भी चल रही है । थीम म्यूजिक बंद हो जाता है । डिजाल्व ।

दिन का समय, घर, पिशी हांफती हुई अपनी छड़ी खटखटाती हुई घर पर चरमराता दरवाजा खोलती है । रसोई में खाना खाती हुई सर्वोजया के चेहरे पर इसकी प्रतिक्रिया दिखती है । पिशी भीतर आती है ।

पिशी : बहू ! घर में हो न बहू ?

सर्वोजया को उसके आने की कोई खुशी नहीं होती । पिशी मुस्कराते हुए नजदीक आती है ।

पिशी : मेरी तबीयत अच्छी नहीं रही । इसलिए मैंने सोचा कि अपनी जिन्दगी के आखिरी दिन अपने पुरखों के घर में ही कांटू ।

सर्वोजया (फ्रेम के बाहर से) : अपने पुरखों के घर का बहाना बनाने की क्या जरूरत थी ? लगता तो ऐसे है जैसे तुम्हें अपने पुरखों के घर की इतनी चिन्ता है कि नींद ही नहीं आती । तुम जा सकती हो । नहीं तो मुझसे बुरा कोई न होगा, कहे देती हूँ ।

पिशी बहुत परेशान, हताश और थकी हुई दिखने लगती है । वह अब भी रसोई के बरामदे की ओर बढ़ रही है।

पिशी : धीरज रखो....

वह अपने बरामदे में चली जाती है । अपनी छड़ी, पीतल का लोटा और चटाई जमीन पर रखकर एक कौने में बैठ जाती है, सर्वोजया बहुत उद्‌विगन है ।

सर्वोजया (फ्रेम के बाहर से) : तुम बैठ गयी हो ?

पिशी (हांफते हुए) : एक मिनट रुको । थोड़ा आराम कर लेने दो ।

दुर्गा मैदान में बैठकर गन्ना चूस रही है । पीछे अपू दिखाई देता है जो उसकी ओर देख रहा है । वह उछलकर खड़ी हो जाती है और चलने लगती है । अपू उसके पीछे चलने लगता है ।

पिशी अपना चेहरा पौंछती है । सर्वोजया उस पर गर्म हो रही है ।

सर्वोजया (फ्रेम के बाहर से) : ठाकुरजी, क्या तुम सो गई हो ?

पिशी (अब भी हांक रही है) : थोड़ा - सा पानी मिलेगा ।

सर्वोजया (फ्रेम के बाहर से) : खुद ही क्यों नहीं निकाल लेती ? तुम्हारे पास अपना बर्तन तो है ।

पिशी अपना लोटा उठाकर बरामदे से उतरती है । फिर रसोई के बरामदे की सीढ़ियों पर बड़ी मुश्किल से हांफती हुए चढ़ती है । सर्वोजया खाना खाती रहती है । उसे पास आया देखकर घड़े पर से ढ़कना उठाती है । पिशी के चेहरे पर आखिरी मुस्कान झलकती है जो जल्दी ही खत्म हो जाती है क्यों सर्वोजया जवाब में नहीं मुस्कराती । पृष्ठभूमि में सितारे पर ट्रिमैलो की धुन शुरू हो जाती है ।

पिशी घड़े को टेढ़ा करके लोटे में थोड़ा-सा पानी निकालती है । उसमें से कुछ पीती है और कुछ सिर पर छिड़ती है फिर बरामदे से चली जाती है । लोटे का बाकी बचा पानी बरामदे के नजदीक रखे एक गमले में डाल देती है ।

वह अपना सामान उठा लेती है । सर्वोजया कठोर चेहरा लिए आधे भरे कटोरे को अपने मुंह के नजदीक लाती है । पिशी बरामदे पर आखिरी नजरें डालती हुई चली जाती है । सितार पर ट्रिमैलो की धुन खत्म हो जाती है । डिजाल्व ।

दुर्गा एक मैदान में है जहां ऊंची ऊंची कांस की झाडियां फैली हुई है । टेलीग्राफ के खम्भे और तार आकाश की पृष्ठभूमि में दिखाई देते हैं ।

टेलीग्राफ के तारों की गूंज सुनाई देती है । दुर्गा बड़ी उत्सुकता से टेलीग्राफ के खंभों की ओर जाती है । अपू कुछ दूरी से उसके पीछे-पीछे चल रहा है । दुर्गा एक खंभे से कान लगाकर गूंज को सुनती है और फिर आगे बढ़ जाती है । अपू दुर्गा को देख रहा है वह भी टेलीग्राफ के खंभे के पास आकर गूंज को सुनता है । दुर्गा कांस की झाडियों के भीतर चली जाती है और अपू भी उसके पीछे-पीछे जाता है । टेलीग्राफ के खंभो की गूंज खत्म हो जाती है ।

अपू के चारों और कांस की ऊंची-ऊंची झाड़ियां है । उसे लगता है वह खो गया है । डिजाल्व।

वह कांस के बीच में से भागता हुआ दुर्गा को आवाज देता है ।

अपू : दीदी....

गन्ने का एक छोटा सा टुकड़ा कहीं से आकर उसे लगता है। वह उसे उठा लेता है और मुस्कराने लगता है। वह देखता है कि दुर्गा कांस की झाडियों के बीच बैठी है।

दुर्गा : बैठ जा... खा लें।

अपू बैठ जाता है और दांतों से गन्ना छीलने लगता है...

अपू इस नई जगह के बारे में जानना चाहता है

अपू : हम कहां है ?

दुर्गा इशारे से कहती है, पता नहीं

अपू गन्ने से एक और इशारा करता है।

अपू : वह क्या है ?

दुर्गा फिर वही इशारा करती है

अपू : अगर मां ने....

दुर्गा अचानक अपू को चुप कराने के लिए उसके मुंह पर हाथ रख देती है। फिर कुछ ध्यान से सुनती हुई बिना आज आवाज के बुदबुदाती है। रेलगाड़ी।

दोनों खड़े हो जाते है और इधर-उधर देखने लगते है अचानक उन्हें इंजन का ऊपरी भाग और धुंए के बादल दिखाई देते हैं वे उसकी ओर भागते हैं। दुर्गा भागती है और गिर पड़ती है। अपू भागता रहता है और जब तक पटरियों के पास पहुँचता है, ट्रेन जा चुकी है। वह गायब हुई ट्रेन की दिशा में आकाश में बचे हुए बादलों को देखता रहता है। डिजाल्व।

बांस के जंगल में अपू और दुर्गा बछड़े को साथ लिए जा रहे हैं। साथ ही वे एक बच्चों का गीत भी गुनगुना रहे हैं। पृष्ठभूमि में बांसुरी पर थीम म्यूजिक।

बांस के झुरमुट के नीचे पिशी मौत की सांसें ले रही है।

बच्चे हल्के-फुल्के मूड में है। दुर्गा रास्ता छोड़कर बांस के झुरमुट की ओर जाती है। अपू उसके पीछे-पीछे जाता है। पृष्ठभूमि में झांझ का संगीत, दुर्गा पिशी के पास जाती है, सोचती है कि वह उसे आश्चर्य में डाल देगी। वह पिशी के सामने जाकर बैठ जाती है। पिशी का चेहरा घुटनों के बीच में छिपा है। दुर्गा झुककर छिपे हुए चेहरे को देखने की कोशिश करती है। जब नहीं दीखता तो वह पिशी के घुटनों को हिलाने लगती है। अपू पास ही खड़ा है।

दुर्गा : (पिशी को हिलाते हुए) : पिशी !

दुर्गा : पिशी, हे पिशी.... पिशी....पिशी.....

झांझ का संगीत खत्म हो जाता है, दुर्गा अभी हिला रही है।

दुर्गा (फुसफुसाते स्वर में) : पिशी

पिशी का सिर एक ओर झुक जाता है। वह लुढ़ककर नीचे गिर जाती है और उसका सिर जमीन से टकराता है।

दुर्गा मरी हुई पिशी के ऊपर झुकती है और डरकर अपना चेहरा हटा लेती है।

डर से हाफती हुए दुर्गा जाने के लिए मुड़ती है।

अपू उसके पीछे -पीछे आता है । जैसे ही वे ढाल पर से भागते है । पिशी का पीतल का लोटा उनके पीछे-पीछे लुढ़कता है । फिर तालाब में गिर जाता है । बच्चे भाग जाते हैं । पृष्ठभूमि में पिशी के स्वर में उसके गाने की आवाज.. । डिजाल्व .. ।।

10.4 पटकथा लेखन के सिद्धान्त

फिल्म और दूरदर्शन के विस्तार के साथ-साथ पटकथा लेखन का महत्व लगातार बढ़ रहा है। पटकथा लेखन के क्षेत्र में उतरने से पहले लेखक को सिनेमा माध्यम के विविध पहलुओं की पर्याप्त जानकारी होना बेहद आवश्यक है । अभी पटकथा लेखन के बारे में बहुत कम जानकारी उपलब्ध है क्योंकि पूना स्थित भारतीय फिल्म और दूरदर्शन संस्थान (फिल्म एण्ड टेलीविजन इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया) को छोड़कर पटकथा लेखन में कोई विधिवत प्रशिक्षण किसी विश्वविद्यालय अथवा संस्थान में नहीं दिया जाता । पटकथा लेखन के विभिन्न तकनीकी पक्षों तथा उससे संबंधित लेखन की समस्याओं पर विचार किए बिना पटकथा लिखना मुश्किल हो जाता है ।

पटकथा लेखन के कोई निश्चित सिद्धान्त तो नहीं बनाए जा सकते । चूंकि फिल्म का आधार पटकथा ही होती है इसलिए उसका सुनियोजित होना आवश्यक है । महत्वपूर्ण बात यह भी है कि पटकथा केवल निर्माता अथवा निर्देशक के लिए नहीं होती वरन् वह पूरी यूनिट के लिए एक आवश्यक दस्तावेज होती है । उसके बिना यूनिट का कोई सदस्य अपना काम ठीक ढंग से नहीं कर सकता । एक फिल्म की यूनिट में शामिल सैकड़ों लोगों की क्रियाशीलता पटकथा पर ही निर्भर होती है । निर्देशक और कलाकारों के अलावा कैमरामेन, वेशभूषा निर्देशक, संवाद लेखक, प्रोडक्शन कंट्रोल आदि पटकथा के बिना एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकते, क्योंकि पटकथा में यूनिट के प्रत्येक विभाग और एक सदस्य के लिए आवश्यक दिशा-निर्देश होते हैं । इन निर्देशों के अभाव में न केवल अव्यवस्था फैलती है बल्कि समय और धन का भी अपव्यय होता है ।

पटकथा के लिए कहानी किसी और लेखक की हो सकती है अथवा पटकथा लेखक स्वयं अपनी कहानी पर पटकथा तैयार कर सकता है । यहाँ यह जानना आवश्यक है कि फिल्मों के लिए जो कहानी लिखी जाती है उसका ढांचा आम कहानियों से कुछ अलग होता है ।

फिल्मी कहानी की भाषा में वह साहित्यिक भाषा और भाव नहीं होता । चूंकि पटकथा के लिए लिखी गई कहानी पहले पटकथा और फिर फिल्म के माध्यम से सामने आती है, इसलिए उसका स्वरूप साहित्यिक कहानियों से भिन्न होता है । वह केवल कहानी के आवश्यक तत्वों और सूत्रों का विवरण मात्र होता है ।

पटकथा के लिए चुनी गई कहानी का विभाजन प्राय: तीन बड़े भागों में कर लिया जाता है - पहले भाग में समस्या, परिवेश और पात्रों का पूरा परिचय आता है, जिससे कथानक के प्रति पूरी जिज्ञासा और उत्सुकता का भाव उत्पन्न हो सके । दूसरे भाग में कहानी की प्रमुख घटनाओं और प्रसंगों को शामिल किया जाता है जबकि तीसरे भाग में क्लाइमैक्स अर्थात परिणाम का जिक्र किया जाता है ।

10.5 कहानी का रूपान्तरण : अन्तर्निहित खतरे

हालांकि साहित्यिक कहानियों और सिनेमा की कहानियों के आधारभूत ढांचे में कुछ मौलिक अन्तर है, फिर भी उत्कृष्ट साहित्यिक कृतियों पर उम्दा फिल्में बनाने के कुछ ईमानदार प्रयास हमारे

यहां हुए हैं । संयोग की बात है कि हिन्दी में जबजब साहित्यिक कृतियों पर और विशेष रूप से हिन्दी की साहित्यिक कृतियों पर फिल्में बनी तो वे बुरी तरह असफल रही जबकि यह बात विदेशी फिल्मों और अन्य भारतीय भाषाओं की फिल्मों के बारे में इतनी सच नहीं है । कथाकार प्रेमचन्द की आधा दर्जन से अधिक कृतियों पर फिल्म बनी है मगर दर्शक उन्हें भुला चुके हैं । दरअसल जब तक फिल्मकार या पटकथा लेखक अथवा संवाद लेखक अपने मानसिक स्तर को साहित्यिक कृतियों के लेखकों के मानसिक स्तर तक नहीं ले जाता, तब तक वह उनकी कृतियों के साथ न्याय नहीं कर सकता । जितना किसी रचनाकार के मानसिक स्तर को समझना जरूरी है, उतना ही रचना के स्थान, माहौल, उसके पात्रों की भाषा, वेशभूषा और परिवेश को भी समझना जरूरी है ।

इसीलिए किसी साहित्यिक कृति पर फिल्म बनाना कोई आसान काम नहीं है । साहित्यिक कृति को सिनेमा में बदलने में यह खतरा बराबर बना रहता है कि कहीं उस रूपान्तरण में कृति की आत्मा ही नष्ट नहीं हो जाए । कृति को अगर विकृत स्वरूप में पेश किया जाएगा तो न तो लेखक उसे स्वीकार करेगा और न दर्शक । हालांकि अंतत: सिनेमा एक ड्रामा है और ड्रामा में थोड़ा-बहुत काल्पनिक और नाटकीय होने की छूट है । नाटकीयता का अंश होने के कारण भी कई बार साहित्यिक कृतियों पर पटकथा तैयार कर उन पर फिल्में बनाई जाती है । लेकिन एक बात जान लेना जरूरी है कि साहित्य सिनेमा के लिए तभी सार्थक हो सकता है जब वह सिनेमा को जीवन के यथार्थ चित्रण के लिए तत्व प्रदान करें । कहानियों की शक्ल में ही नहीं, बल्कि तकनीकी दृष्टि से भी कथा को सिनेमा बनाने में मदद प्रदान करें ।

सिनेमा में साहित्यिक कृतियों को विकृत होने से बचाने के लिए यह भी जरूरी है कि उसमें इमोशन को कम करके विचार को सामने लाया जाए । किसी भी साहित्यिक कृति में जो संदेश अन्तर्निहित है, उसे सिनेमा के माध्यम से उभारा जाए, तभी साहित्य की सार्थकता भी सिद्ध हो पाएगी ।

एक ही कृति पर फिल्में बनी हों फिर फिल्म की तुलना फिल्म से ही की गई, कृति से नहीं। रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्यों पर भी कई फिल्में बनी । तकनीकी लिहाज से बेहतर न होने के बावजूद इन महाकाव्यों की आत्मा फिल्मों में उपस्थिति होती थी । मगर जैसे-जैसे तकनीकी कुशलता हासिल हुई, कहानी के तत्व गुम होते चले गए और तकनीक हावी हो गई । इससे सिनेमा की रचनात्मकता नष्ट होने लगी और उत्कृष्ट साहित्यिक कृतियों पर भी दूसरे दर्जे की फिल्में हमारे सामने आने लगी। सिनेमा की अपनी अलग भाषा विकसित हुई जिसे हम बम्बइया भाषा कहते हैं। पटकथा लेखकों ने किसी भी कहानी के रूपान्तरण के दौरान आम तौर पर इसी बम्बइया भाषा का उपयोग किया ।

10.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

ख्वाजा, अहमद अब्बास : आर्ट एण्ड कॉमर्स इन इंडियन सिनेमा

सेवेण्टी ऑफ इंडियन सिनेमा

आन्द्रे, बाजा : वॉट इज सिनेमा

अरुण, वासुदेव : द न्यू इंडियन सिनेमा

मृत्युंजय : हिन्दी सिनेमा का सच (समकालीन सृजन)

मनमोहन चड्ढा : हिन्दी सिनेमा का इतिहास

विनोद भारद्वाज : नया सिनेमा

सारिका (फिल्म साहित्य कथा अंक : फरवरी - 1985)

10.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. फिल्म निर्माण में कथा-पटकथा के महत्व को रेखांकित करते हुए पटकथा लेखन के विभिन्न चरणों को समझाइए ।
2. पटकथा लेखन के आवश्यक सिद्धान्त और तत्व कौन-कौन से है ?
3. फिल्म निर्माण की प्रक्रिया में कथा, पटकथा और संवाद लेखक की भूमिका का विवरण लिखिए।
4. किसी एक सामाजिक विषय पर कम से कम दस पृष्ठों में एक पटकथा लिखिए ।

इकाई 11 बच्चों के लिए लेखन

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.1.1 बालक का स्वतंत्र संसार

11.1.2 बाल साहित्य का अर्थ

11.2 बाल साहित्य : स्वरूप और महत्व

11.2.1 बाल साहित्य का स्वरूप

11.2.2 बाल साहित्य का महत्व

11.2.3 बालमन की अभिव्यक्ति

11.2.4 बाल साहित्य की उपादेयता

11.2.5 बाल साहित्य का लक्ष्य

11.3 बाल साहित्य : कल और आज

11.4 बाल साहित्य के विविध रूप

11.4.1 बाल कविता

11.4.2 बाल कहानी

11.4.3 बाल उपन्यास

11.4.4 बाल नाटक एवं रंगमंच

11.4.5 बाल जीवनी साहित्य

11.4.6 स्कूल बालोपयोगी लेखन

11.5 बच्चों के लिए लेखन में ध्यान रखने योग्य बातें

11.6 सारांश

11.7 कुछ सुझाव

11.8 शब्दावली

11.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

11.10 निबन्धात्मक प्रश्न

11.11 परिशिष्ट

11.0 उद्देश्य

यह पाठ पूरा हो जाने पर -

- बच्चों के लिए साहित्य अर्थात् बाल साहित्य के स्वरूप और महत्व से परिचित हो जाएंगे।
- बच्चों के लिए लिखने वाले प्रमुख लेखकों एवं उनकी कृतियों से परिचित हो जाएंगे ।
- बच्चों के लिए लेखन में आने वाली कठिनाइयों की जानकारी पा सकेंगे ।
- बच्चों के लिए लेखन और बड़ों के लिए लेखन के अंतर को समझ सकेंगे और

- हिन्दी में बाल साहित्य की स्थिति को जान जाएंगे ।

11.1 प्रस्तावना

फ्रांस के सुप्रसिद्ध विद्वान रूसो का कहना है कि बालक का मन शिक्षक की पाठ्यपुस्तक है जिसे उसको पहले पृष्ठ से लेकर अंत तक भलीभांति अध्ययन करना चाहिए । दूसरी ओर आयु वर्ग एवं शिक्षा मनोविज्ञान पर विचार करते हुए मनोवैज्ञानिकों ने इस बात पर बल दिया है कि अवस्था के अनुसार बच्चे का अपना पृथक अस्तित्व होता है । वे स्वतंत्र होते है । उनके मनोविज्ञान को समझना आसान नहीं है । तभी तो खलील जिब्रान ने कहा है कि तुम उन्हें अपना प्यार दे सकते हो लेकिन विचार नहीं, क्योंकि उनके पास अपने विचार होते है । तुम उनका शरीर बंद कर सकते हो, लेकिन आत्मा नहीं, क्योंकि उनकी आत्मा आने वाले कल में निवास करती है । उसे तुम नहीं देख सकते हो, सपनों में भी नहीं देख सकते । तुम उनकी तरह बनने का प्रयत्न कर सकते हो, लेकिन उन्हें अपनी तरह बनाने की इच्छा मत रखना, क्योंकि जीवन पीछे की ओर नहीं जाता और न बीते हुए कल के साथ रुकता ही है ।"

बच्चा समाज की एक स्वतंत्र इकाई है । उसकी स्वतंत्रता और कोमलता के संबंध में रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भी लिखा है कि - 'बालक की प्रकृति में मन का प्रताप बहुत क्षीण होता है। जगत् संसार और उसकी अपनी कल्पना उस पर अलग-अलग आघात करती है, एक के बाद दूसरी आकर उपस्थित होती है । मन का बंधन उसके लिए पीड़ाजनक होता है । सुसंलग्न कार्य-कारण-सूत्र पकड़कर चीज को शुरु से लेकर आखिर तक पकड़े रहना उसके लिए दुस्साध्य होता है ।'

इसीलिए यह कहा जाता है कि बच्चों के लिए लेखन आसान नहीं है । उनके मनोविज्ञान को समझे बिना बाल साहित्य लिखा ही नहीं जा सकता है । वस्तुत: बाल साहित्य देखने में जितना सरल और आसान लगता है, सर्जना के स्तर पर वह उतना ही कठिन होता है ।

11.1.2 बाल साहित्य का अर्थ

शाब्दिक दृष्टि से बाल साहित्य के निर्माण में 'बाल' और 'साहित्य' दो शब्दों का योग है, जिसका तात्पर्य है बच्चों का साहित्य । जो साहित्य बच्चों के मन और मनोभाव को परखकर उन्हीं की भाषा में उन्हीं के स्तर पर उतरकर लिखा जाता है वही सही अर्थों में सार्थक बाल साहित्य होता है ।

हालांकि हिन्दी बाल साहित्य का इतिहास पुराना है, परन्तु साहित्य के दिग्गज समीक्षकों ने इसे कभी गंभीरता से नहीं लिया । इसका परिणाम यह है कि हिन्दी के इतिहास ग्रन्थों में बाल साहित्य की चर्चा ही नहीं हुई । चाहे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का हिन्दी साहित्य का इतिहास रहा हो या डॉ नगेन्द्र का भारी-भरकम इतिहास ग्रन्थ, इनमें कहीं बाल साहित्य का नामोनिशान नहीं है । बाद के हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखकों ने भी इसी परंपरा का अनुकरण किया । परंतु आज परिस्थितियां भिन्न है । जहां समाज में बच्चों के पृथक अस्तित्व पर चर्चा हो रही है, वहीं उनके साहित्य अर्थात् बाल साहित्य का महत्व भी समझा जाने लगा है । पिछले दो-तीन दशकों में बाल साहित्य पर अनेक रोचक ग्रंथ प्रकाश में आए हैं । इतिहास लेखन में भी बाल साहित्य की चर्चा होने लगी है, यह एक शुभ संकेत है ।

11.2 बाल साहित्य : स्वरूप और महत्व

प्रारंभ में बड़ों के लिए जो साहित्य लिखा जाता था, बच्चे उसमें से अपने मतलब की सामग्री छांट लिया करते थे । पंचतंत्र, हितोपदेश, कथासरित्सागर आदि ग्रंथों की अनेक रचनाएं आज भी बच्चों में लोकप्रिय है । 'एलिस इन वडरलैंड' 'विनोक्यों' 'टॉम सापर' 'राबिन्सन क्रूसो' आदि ऐसी ही रचनाएं हैं ।

बच्चों की मानसिकता को ध्यान में रखकर लिखे गए बाल साहित्य को दो भागों में बांटा जा सकता है ।

पहला - वह साहित्य जिसका सृजन बच्चों को दृष्टि में रखकर बड़े रचनाकारों द्वारा किया जाता है ।

दूसरा - वह साहित्य जिसका सृजन स्वयं बच्चों द्वारा किया जाता है तथा उसमें साहित्य कहलाने के गुण मौजद रहते हैं ।

सन् 1960 के पूर्व का अधिकांश बाल साहित्य पहले प्रकार का उपलब्ध है लेकिन आज परिस्थितियां भिन्न है । बच्चों ने कलम अपने हाथों में उठा ली है । वे बाल साहित्य लेखन में रुचि लेने लगे हैं । हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य आलोचक डा. नगेन्द्र को भी बालक की आवश्यकताओं में एक महत्वपूर्ण आवश्यकता अच्छे बाल साहित्य की महसूस हो रही है तभी उनकी दृष्टि में - 'पहले समाज में बालक का अस्तित्व खिलौने के रूप में था । उसको प्यार और दुलार तो मिलता था लेकिन उसे समाज का एक अभिन्न अंग नहीं समझा जाता था । लेकिन आज के बालक को कल का नागरिक माना जाता है और बालक की आवश्यकताओं में एक आवश्यकता अच्छे बाल साहित्य की भी है ।'

बाल साहित्य के स्वरूप निर्धारण के संबंध में भी अनेक अवधारणाएं हैं । भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों ने इसे अपने - अपने ढंग से व्यक्त किया है । पाश्चात्य समीक्षक लिलियन स्मिथ का कहना है कि- 'यह आवश्यक नहीं है कि बच्चों के लिए लिखी गई सभी पुस्तकें साहित्य ही हों और न यही आवश्यक है कि बड़े लोग जिसे बाल साहित्य मानते है, बाल-रुचि के अनुकूल चुनी गई पुस्तक उस कसौटी पर खरी उतर जाए । ऐसे भी लोग है जो बड़ों की बातों का सरल ढंग से विवेचन बाल साहित्य मानते हैं । लेकिन यह विचार बच्चों को बड़ों का सूक्ष्म संस्करण सिद्ध करता है और वास्तव में यह गलत धारणा बचपन द्वारा उत्पन्न ही हुई है । बच्चे वास्तव में एक ऐसी जाति होते हैं जिनका जीवन अनुभव बड़ों से बिल्कुल भिन्न होता है । उनकी एक अलग दुनिया होती है, जिसमें जीवन के मूल्य बाल-सुलभ मनोवृत्ति के आधार पर निर्धारित होते हैं । बड़ों के अनुभव के आधार पर नहीं ।'

बाल साहित्य के लब्ध प्रतिष्ठित समीक्षक निरंकार देव सेवक ने भी लिलियन स्मिथ का ही समर्थन किया है : - 'बच्चों का मन इतना चंचल और कल्पनाएं इतनी तेज होती है कि किन्हीं निश्चित नियमों में बंधा हुआ साहित्य उनके लिए लिखा ही नहीं जा सकता । बड़ों के लिए जो सर्वथा असंगत और अर्थहीन होता है, वह बच्चों के लिए युक्तिसंगत और अर्थपूर्ण हो सकता है । बच्चों का साहित्य, बड़े ही उन्हें रचकर देते हैं । इसलिए बाल साहित्य की सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि जब तक वह बड़े उनकी भावनाओं, कल्पनाओं को पूर्णत: आत्मसात नहीं कर पाते, तब तक उनके लिखे पर उनके अनुभव, ज्ञान तथा जीवनादर्शों की छाप आ जाना नितांत स्वाभाविक है ।

बच्चों की कल्पनाएं और अनुभव बड़ों से सर्वथा भिन्न होते हैं । उनकी दुनिया ही बड़ों की दुनिया से अलग होती है । बड़ों के संसार में जो बहुत महत्व का समझा जाता है, बच्चों की दुनिया में उसका कोई मूल्य नहीं होता और बच्चों की दुनिया में जो कुछ बहुत महत्व का होता है वह बड़ों की दृष्टि में कोई विशेष महत्व नहीं रखता । अतएव बच्चों का साहित्य लिखने में वही सफल हो सकता है जो बड़प्पन के भार को रत्ती-रत्ती कम कर, बच्चों की सरलता, कौतूहल और जिज्ञासा को स्वाभाविक रूप से अपने मन में धारण कर ले ।

बच्चों की ख्याति प्राप्त पत्रिका 'बालसखा' के भूतपूर्व संपादक लल्ली प्रसाद पांडेय का कहना है - 'बाल साहित्य वही लिख सकता है जो अपने आपको बच्चों जैसा बना ले । बड़े होकर बच्चा बनना मुश्किल है और उससे भी अधिक मुश्किल है बच्चा बनकर उनके अनुकूल लिखना । इसलिए जो लोग बच्चों के लिए लिखते हैं, वे एक पवित्र कार्य करते हैं । उनका कार्य साधना का कार्य है ।'

मनोरंजन बाल साहित्य का एक प्रमुख अंग है । वास्तव में वही साहित्य बाल साहित्य कहलाने का अधिकारी है जिसमें बच्चे रस ले सकें तथा अपनी भावनाओं और कल्पनाओं का विकास कर सकें । डॉ. रामकुमार वर्मा का तो यहां तक कहना है कि - 'बाल साहित्य ऐसा हो जो बच्चों में सहज सात्विक उत्सुकता उत्पन्न करे, उनके कौतूहल का प्रवर्द्धन और पोषण करें तथा जिज्ञासा की तृप्ति करे । बाल साहित्य का विषय ऐसा होना चाहिए जिससे बालक संकीर्णताओं से ऊपर उठकर सच्ची मानवता और विश्वकल्याण की भावना से अपना जनजीवन व्यतीत करने का संकल्प ले ।”

11.2.2 बाल साहित्य का महत्व

बाल साहित्य के महत्व पर प्रकाश डालते हुए स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधान मंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने भी कहा था - 'बचपन में ही पढ़ने की रुचि जागृत की जा सख्ती है । अत: यह विशेष रूप से आवश्यक है कि हम बच्चों को पढ़ने की आदत डालने के लिए प्रोत्साहित करें और उन्हें उचित मनोरंजक पुस्तकें दें । बच्चों का दिमाग जिज्ञासाओं और अधिक जानकारियों के लिए लालायित रहता है । यदि इस उद्देश्य को दृष्टिगत रखकर बच्चों की रुचि के अनुकूल पुस्तकें तैयार की जाएं तो निश्चय ही बच्चों की रुचि पढ़ने की ओर बढ़ेगी ।'

11.2.3 बाल मन की अभिव्यक्ति

बाल साहित्य के प्रथम शोधकर्ता डॉ. हरिकृष्ण देवसरे भी इस तथ्य की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते हैं - 'बाल साहित्य में बाल-पन की अनुभूतियों की सहज अभिव्यक्ति ही उसे अपने पाठकों द्वारा स्वीकृत बनाती है । बच्चे अपनी रचनाओं द्वारा अपने पात्रों, वस्तुओं तथा स्थितियों से जुड़ने का प्रयास करते हैं । यह तभी संभव होता है जब वे अपने रचनाओं को पढ़कर उनसे तादात्म्य स्थापित कर लेते हैं । इसीलिए बाल साहित्य में विषय की सहजता और भाषा की सरलता का महत्व है ।'

11.2.4 बाल साहित्य की उपादेयता

बाल साहित्य प्रारंभ से ही बच्चों मे उन गुणों का बीजारोपण करता है जो भविष्य में चरित्रवान तथा नैतिक मूल्यों की रक्षा करने वाले होते हैं । बाल साहित्य बच्चों में भावात्मक एकता, सांवेगिक परिलक्षता तथा नैतिक उत्थान को बढ़ावा देता है । वह उन्हें आशावादी तथा आत्मनिर्भर बनने में भी

मदद करता है । वास्तव में बाल साहित्य की सार्थकता तभी है जब वह बच्चों में अच्छे संस्कार डाल सके । इसमें कोई दो राय नहीं है कि स्वस्थ बाल साहित्य का सृजन परिभाषाओं में बांधकर नहीं किया जा सकता । इसकी तुलना जादू से की जा सकती है जो कि अपने दर्शकों को चमत्कृत करता है । यह ऐसा जादू है जो कहीं -कहीं बाल साहित्य की परिभाषा की भी उपेक्षा कर देता है ।

तथ्य तो यह है कि बाल साहित्य का मूल उद्देश्य एक प्रकार से सत्प्रेरणा देना चाहिए। बाल साहित्य ऐसा हो जो मनोरंजन के साथ-साथ नैतिकता, सत्यता, देश-प्रेम, चरित्र-निर्माण एवं भारतीय चिंतन पैदा कर सके । इन गुणों के अतिरिक्त बाल साहित्य ऐसा हो जो बच्चों में प्रारंभ से ही धर्म, जाति एवं वर्ग के भेद भुलाकर समाज को भावात्मक एकता एवं राष्ट्रीयता के सूत्र में बांध सके ।

11.2.5 बाल साहित्य का लक्ष्य

वस्तुतः बाल साहित्य का लक्ष्य बच्चों के मानसिक स्तर पर उतरकर उन्हें रोचक ढंग से नई जानकारियां देना है । यदि बच्चे में कल्याण भावना और सौन्दर्य परख की दृष्टि जागृत करनी हो तो उनकी समस्त आकांक्षाओं और जिज्ञासाओं का स्कूली शिक्षा के साथ ही विकास आवश्यक है । बच्चों के चंचल मन और जिज्ञासाओं को प्रेरित करने का मुख्य साधन बाल साहित्य ही है ।

11.3 बाल साहित्य : कल और आज

बाल साहित्य की विधिवत शुरूआत भारतेन्द युग से होती है । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की प्रेरणा से सन् 1882 में 'बालदर्पण' नामक बच्चों की पहली पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ हुआ था । स्वयं भारतेन्दु ने 'बालाबोधिनी' नाम से महिलाओं की पत्रिका निकाली थी, जिसमें बालिकाओं के लिए सिलाई-कढ़ाई, चूल्हा-चौका तथा अन्य सामाजिक विषयों पर रोचक सामग्री प्रकाशित की जाती थी । आज बाल साहित्य की विकास यात्रा एक शताब्दी पार कर चुकी है ।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपने नाटकों में कहीं -कहीं सरल भाषा में कई महत्वपूर्ण पद्य दिए हैं । 'अंधेरे नगरी चौपट राजा' नामक नाटक में 'चूरन का लटका' तथा ' चने का लटका' कविताएं बच्चों ने बहुत पसंद की । बाल साहित्य के सुधी समीक्षक स्व. निरंकार देव सेवक के मत में - 'ये कविताएं बिल्कुल बालगीत जैसी लगती है । भारतेन्दु ने कुछ पहेलियां और मुकरियां भी लिखी हैं जिनसे बच्चों का भरपूर मनोरंजन होता है ।' भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समकालीन पं. श्रीधर पाठक ने विशेष रूप से बच्चों के लिए कुत्ता, बिल्ली, तोता, मैना, कोयल आदि सुपरिचित विषयों पर बड़ी मनोहारी बाल कविताएं लिखी जो 'मनोविनोद' नामक संकलन में संकलित की गई है ।

भारतेन्दु ने अपने सीमित साधनों में जिस बाल साहित्य का बीजारोपण किया था वह आगे चलकर द्विवेदी युग में पुष्पित एवं पल्लवित हुआ । द्विवेदी युग के महत्वपूर्ण रचनाकारों में बालमुकुंद गुप्त ने 'खिलौना', कामता प्रसाद गुरु ने ' पद्य पुष्पावली', पं. सुदर्शनाचार्य ने 'चुन्नू - मुन्नू' नामक पुस्तकों में बच्चों के लिए प्रेरक और उपयोगी साहित्य का सृजन किया । इनके अतिरिक्त मन्नन द्विवेदी गजपुरी, मैथिलीशरण गुप्त तथा रामनरेश त्रिपाठी ने भी बच्चों के लिए छिटपुट कविताएं लिखी । मुरारीलाल शर्मा 'बालबन्धु' का प्रार्थना गीत 'वह शक्ति हमें दो दयानिधे, कर्तव्य मार्ग पर डट जावें' लंबे समय तक अनेक विद्यालयों तथा बालचर संस्थाओं में गाया जाता रहा । ग्रामीण विद्यालयों में आज भी यही प्रार्थना दुहराई जाती है ।

डॉ. विद्याभूषण 'विभु' ने 'लालबुझक्कड़', 'शेखचिल्ली', स्वर्ण सहोदर ने 'गिनती के गीत' 'नटखट हम', शम्भूदयाल सक्सेना ने 'आ री निंदिया', 'बाल कवितावली' ठाकुर श्रीनाथसिंह ने 'गुबारा', 'बाल भारती', सुभद्रा कुमारी चौहान ने 'कोयल', सभा का खेल', प. सोहनलाल द्विवेदी ने 'बच्चों के बापू', 'हंसो हंसाओ' तथा रमापति शुक्ल ने 'हुआ सवेरा', 'अंगूरों का गुच्छा', पुस्तकों के माध्यम से बाल साहित्य के भंडार को भरा । पं. लल्लीप्रसाद पांडेय ने 'बाल सखा' पत्रिका निकालकर जहां बाल साहित्य को गति प्रदान की, वहीं सुदर्शनाचार्य ने 'शिशु', आचार्य राम लोचन शरण ने 'बालक', 'पं. रामजी शर्मा ने 'खिलौना', विश्व प्रकाश ने 'चमचम', कुंवर सुरेश सिंह ने 'कुमार' तथा व्यथितहृदय ने 'तितली' और 'मदारी' बाल पत्रिकाएं निकालकर बाल साहित्य को स्थायित्व प्रदान किया ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बाल साहित्य की धूम मच गई । सरकारी गैर-सरकारी संस्थानों ने बाल साहित्य की लगभग सभी विधाओं की पुस्तकें प्रकाशित हुई । भारत सरकार के प्रकाशन विभाग से 'बाल भारती' नामक बच्चों की संपूर्ण पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ हुआ । यह पत्रिका अपने जीवन के 50 वर्ष पूरे कर चुकी है । हाल ही में स्वतन्त्रता की स्वर्ण जयन्ती के साथ इस पत्रिका ने अपनी भी स्वर्ण जयन्ती मनाई है । आगे चलकर 'पराग', 'नंदन', 'शावक' आदि बाल पत्रिकाएं अस्तित्व में आई जिनके माध्यम से ढेर सारा बाल साहित्य प्रकाशित होकर सामने आया ।

इसी समय आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली से योगेन्द्र कुमार लल्ला और श्रीकृष्ण के संपादन में 'प्रतिनिधि सामूहिक गान' तथा 'प्रतिनिधि बाल सामूहिक गान' शीर्षकों से महत्वपूर्ण पुस्तकें प्रकाशित हुई । बाल साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में नए-नए प्रयोग किए जिन्हें बच्चों ने बहुत पसंद किया। हरिकृष्ण देवसरे की ''नए परीलोक में ', शारदा मिश्र की 'नीमल परी और मसहरी की देवी' तथा शिवमूर्ति सिंह वत्स की 'सुनहली मछली' पुस्तकों में परंपरागत लीक से हटकर बच्चों को नए चिन्तन से जोड़ा गया । भारत के प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू को बच्चों से विशेष अनुराग था । उन्होंने बच्चों को स्वस्थ और रोचक बाल साहित्य प्रदान करने के उद्देश्य से प्रसिद्ध कार्टूनिस्ट शंकर के सहयोग से 'चिल्ड्रेंस बुक ट्रस्ट' की स्थापना की, जहां से आज भी अच्छा बाल साहित्य प्रकाशित होता है । बच्चों को केन्द्र में रखकर 'राष्ट्रीय बाल भवन' अनेक गतिविधियाँ संचालित करता है । यहां से प्रकाशित 'अक्कड़ बक्कड़' पुस्तक के लेखक, चित्रकार, संपादक और संयोजक बच्चे ही हैं ।

सन् 1957 में स्थापित नेशनल बुक ट्रस्ट भी बाल साहित्य प्रकाशित करता है । हाल ही में नेशनल बुक ट्रस्ट ने राष्ट्रीय बाल साहित्य केन्द्र की स्थापना की है जिसे सूचना व प्रलेखन, प्रशिक्षण व प्रचार प्रसार तथा अनुसंधान व विकास नामक घटकों में विभाजित किया गया है । राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एन. सी. ई. आर. टी.) हर दूसरे वर्ष बाल साहित्य की प्रतियोगिता आयोजित करता है जिसके माध्यम से सुरुचिपूर्ण बाल साहित्य सामने आता है ।

आज के बाल साहित्य की सजाने -संवारने में जहाँ पुरानी पीढ़ी के बाल साहित्यकारों का विशेष स्थान है, वहीं नई पीढ़ी के बाल साहित्यकारों ने नए प्रतीकों, नए बिम्बों तथा मौलिक उद्भावनाओं के बाल साहित्य की नई जमीन खोजी है । पाठ्यपुस्तकों में सर्वाधिक पढ़ाए जाने वाले द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी की महत्वपूर्ण कृति 'बाल गीतायन' आज भी मील का पत्थर है ।

श्रीमती शकुंतला सिरोठिया का बाल संसार समग्र एक अभिनव प्रयास है । बाल साहित्य लेखन के लिए उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान से पुरस्कृत डॉ. श्रीप्रसाद की 'आ री कोयल' 'एक थाल मोती से

भरा' तथा 'आंगन के फूल' आदि 40 कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं । चन्द्रपालसिंह यादव 'मयंक' की 'फुलवारी' में 'सैरसपाटा' करते हुए 'रंगबिरंगे फूल' देखना बाल साहित्य की उपलब्धि है । लगभग ढ़ेढ दर्जन पुरस्कारों से सम्मानित डॉ. हरिकृष्ण देवसरे 'बहता पानी कहे कहानी', 'संयुक्त राष्ट्र बच्चों के लिए' तथा 'मुहावरों की कहानियां' लिखकर अपना गौरवपूर्ण स्थान बना चुके हैं । विनोद चन्द पांडेय' 'विनोद' की 'बाल कवितान्जलि' , 'गौरव गान', विष्णुकांत पांडेय की 'वीणा गाए हंसे विनोद' तथा 'मेरे प्यारे-प्यारे बाल गीत' आदि महत्वपूर्ण कृतियां है ।

शंकर सुल्तानपुरी की बाल साहित्य की 200 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं । 'मेरी प्रिय बाल कविताएं' के कवि सूर्य कुमार पांडेय बाल साहित्य में नए प्रयोगों के लिए चर्चित है । कौशलेन्द पांडेय की कृतिं 'देश भक्ति रोबोट' बच्चों को नए-नए विषयों से परिचित कराती है । रवीन्द्र कुमार 'राजेश' की 'अपने-अपने मम्मी-पापा' तथा 'कविताओं में पढ़ो कहानी' बच्चों में बहुत लोकप्रिय है । डॉ. सुरेन्द्र विक्रम की 'इक्कीसवीं सदी की ओर' तथा 'सारा देश हमारा घर' सहित एक दर्जन पुस्तकें छप चुकी हैं । डॉ. हरिवंशराय बच्चन ने अपने पोते -पोतियों के लिए काफी बाद में बाल साहित्य लिखा । उनकी 'जन्म दिन की भेंट' 'नीली चिड़ियां ' तथा 'बंदर बांट' पुस्तकें प्रकाश में आ चुकी हैं । नरेन्द्र चन्द्र सक्सैना 'बंद होने के कगार' पर आई 'बाल दर्शन' पत्रिका को अपने साधनों से जीवित किए हुए हैं ।

बच्चों के लिए ज्ञानवर्द्धक और रोचक नाटक लिखने में विनोद रस्तोगी चर्चित नाम है । धर्मपाल शास्त्री ने 'खेलें कूदें नाचें गाएं' तथा 'मेरी गुड़िया कुछ तो बोल' कृतियां देकर बाल साहित्य में मानक स्थापित किया है । सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के बालनाटक 'भों भों खों खों' , 'लाख की नाम' बच्चों का भरपूर मनोरंजन करते हैं।

मध्य प्रदेश के नारायण लाल परमार बाल साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर हैं । उनकी पुस्तक 'वाणी ऐसी बोलिए' रोचक प्रेरक प्रसंगों का संकलन है । श्रीमती इंदिरा परमार भी बराबर बाल साहित्य लिख रही हैं । 'अच्छी आदतें और स्वास्थ्य' कृति के बाद 'निंदिया रानी' उनका प्रमुख बाल काव्य संकलन है । राजस्थान के मनोहर वर्मा बाल साहित्य के गौरव हैं । उनकी बाल साहित्य की 100 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं । डॉ. राष्ट्रबन्धु का बालसाहित्य सृजन हमें समय से जोड़ता है, उनकी 'टेसूजी की भारत यात्रा' में भारत का भ्रमण कराया गया है । बाबूलाल शर्मा 'प्रेम' आज भी सर्वाधिक छपने वाले बाल साहित्कार हैं ।

'बच्चों की 51 कविताएं कृति पर हिन्दी अकादमी दिल्ली का पुरस्कार प्राप्त करने वाले रमेश कौशिक ने बच्चों के लिए कुछ रूसी अनुवाद भी उपलब्ध कराया है । दामोदर अग्रवाल बाल काव्य में नए प्रयोगों और मौलिक कल्पनाओं के लिए चर्चित रहे हैं । 'चल मेरी नैया कागजवाली' उनकी प्रमुख बाल काव्य कृति है । डॉ. शेरजंग गर्ग ने बच्चों के लिए स्वस्थ हास्य लिखा है । डा. श्यामसिंह 'शशि' ने आदिवासी बच्चों को लेकर उपयोगी सामग्री प्रस्तुत की हैं । चक्रधर नलिन ने बाल साहित्य पर अच्छे समीक्षात्मक निबंध लिखे हैं जो 'उत्तर प्रदेश' 'हिन्दुस्तानी', सम्मेलन पत्रिका' तथा 'अतएव' आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं । डॉ. सरोजिनी प्रीतम ने छोटी-छोटी बालोपयोगी हास्य कहानियां लिखी हैं । प्रयाग शुक्ल ने बाल साहित्य को अपनी रचनाओं से नया चिंतन प्रदान किया है । सुंदर लाल'अरुणेश'

की 'फुलवारी' में बाल साहित्य के अनेक फूल हैं । डा. दिविक रमेश की कृति 'हाथी अगर खेलता होली' विशेष रूप से चर्चित है ।

डॉ. रोहिताश्व अस्थाना ने बच्चों के लिए मनोहारी गजलें लिखी हैं, उनका संकलन 'नन्हीं गजलें' शीर्षक से छप चुका है । इस परंपरा को जहीर कुरेशी, सुरेश विमल, अहद प्रकाश, श्याम बेबस तथा रमेशराज आदि ने आगे बढ़ाया है । डॉ. रूपसिंह चन्देल ने बच्चों के लिए ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित उपन्यास लिखे है । श्याम कुमार दास ने बंगला से हिन्दी में बाल साहित्य के कई अनुवाद प्रस्तुत किए हैं । घमंडीलाल अग्रवाल ने अच्छे बाल एकांकी लिखे हैं । उनका 'पापा मम्मी पर मुकदमा' संग्रह बाल साहित्य की नई खोज है ।

पटना (बिहार) के भगवती प्रसाद द्विवेदी का गद्य और पद्य दोनों में समान रूप से अधिकार है । उनकी 'जंगल मे मंगल', 'रसीले नीबू , कृतियां चर्चित है । डॉ. अजय प्रसून, कलीम आनंद, प्रमोद जोशी, धीरेन्द्र कुमार यादव, सत्यदेव सवितेन्द्र, सुधीर सक्सैना 'सुधि', अशोक श्रीवास्तव 'अंजान', शुगमचन्द्र मुक्तेश, अनंत कुशवाहा, कमल सौगानी, राजकुमार जैन 'राजन', अमरनाथ शुक्ल, कमलेश दिवेदी चित्रेश, अनुज प्रताप सिंह, नागेश पांडेय संजय', रमाशंकर, जाकिर अली 'रजनीश' , हरिबल्लभ बोहरा 'हरि' रामकुमार गुप्त, डॉ. भैरूलाल गर्ग, अखिलेश श्रीवास्तव 'चमन', अमर गोस्वामी, अशोक 'अंजुम', डॉ. उषा यादव, कमलेश भट्ट 'कमल' , कन्हैयालाल 'मत्त' आदि अनेक नाम हैं जो बाल साहित्य सृजन में रत हैं ।

पिछले दो दशकों में बालकाव्य में बिल्कुल नए बिम्बो और प्रतीकों की खोज प्रारंभ हुई । बाल साहित्यकारों ने पहल करके बच्चों को नई भावभूमि से जोड़ा । डा. हरीश निगम, राजनारायण चौधरी, रमेश चन्द्र पंत, रामानुज त्रिपाठी, रमेश तैलंग, प्रकाश मनु, देवेन्द्र कुमार, रामसागर 'सदन', कृष्ण 'शलभ', हरे राम रामहंस', श्याम सुशील, डा. दिनेश चमोला, डा. सुशील सिद्धार्थ, जगदीश चन्द शर्मा, अरनी राबर्ट्स आदि की रचनाएं इसका प्रमाण है ।

बाल साहित्य लेखन के क्षेत्र में महिलाओं ने भी महत्वपूर्ण प्रयास किया है । बाल कहानियां और दूरदर्शन पर अनेक धारावाहिकों की लेखिका विभा देवसरे का नाम किसी परिचय का मोहताज नहीं है । डा. मधु पंत राष्ट्रीय बाल भवन, नई दिल्ली की निदेशिका है और प्रतिवर्ष बाल साहित्य पर कार्यक्रम आयोजित करके स्वस्थ बाल साहित्य लेखन को बढ़ावा दे रही है । उनके संपादन में 'त्रिविधा', 'त्रिपदा, 'त्रिधारा' तथा 'त्रिपथगा' पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं । उषा महाजन, डॉ. विजय गुप्त, शांति अग्रवाल, सुरेखा पांणदीकर, मनोरमा जफा, मनोरमा श्री वास्तव, रंजना सक्सैना, ऋचा कुलश्रेष्ठ, अलका पाठक, कु. अंशु शुक्ला, आशारानी व्होरा, कमल मुसद्दी, डॉ. कृष्णा नागर, डॉ. बानो सरताज, पद्मा चोगीवकर, मालती शर्मा, रजनी पाठक, विमला भंडारी, विमला रस्तोगी आदि निरंतर बच्चों के लिए लिख रही है । जीवनियां पढ़ने में न केवल रोचक लगती है अपितु पाठकों को शिक्षा भी प्रदान करती है । लीलाधर शर्मा 'पर्वतीय' के संपादन में उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ से प्रकाशित ' महापुरुषों की जीवनियां' पठनीय ही नहीं संग्रहणीय भी है । इसमें इक्यावन महापुरुषों की जीवनियां बाल साहित्यकारों से लिखवाई गई है ।

बच्चों के लिए नाटक लिखने की दिशा में राधेश्याम 'प्रगल्भ', 'विष्णु प्रभाकर, मस्तराम कपूर, रेखा जैन, के. पी. सक्सैना, श्रीकृष्ण मनोहर वर्मा, सत्येन्द्र शरत्, आदि के प्रयास सराहनीय है ।

11.4 बाल साहित्य के विविध रूप

बड़ों के साहित्य की तरह बाल साहित्य के भी विविध रूप हैं जिनका निरूपण इस प्रकार किया जा सकता है -

1. बाल कविता
2. बाल कहानी
3. बाल उपन्यास
4. बाल नाटक एवं बालरंगमंच
5. बाल जीवनी साहित्य
6. स्फुट बालोपयागी लेखन

11.4.1 बाल कविता

बाल कविता बच्चों के मनोरंजन का एक प्रमुख साधन है । इसके माध्यम से बच्चे खेल-खेल में बहु त कुछ सीख जाते हैं । निरंकार देव सेवक के अनुसार 'बालगीत बाल साहित्य का एक अभिन्न अंग है । बडों की भाषा में जिसे कविता कहा जाता है उसे ही बच्चों की भाषा में बाल गीत कहते हैं । बच्चों को भाषा ज्ञान कराने की दृष्टि से बाल गीत बड़े उपयोगी होते हैं । बच्चों के रहन-सहन, रुचि, स्वभाव, भाषा, कल्पनाएं और भावनाएं बड़ों से सर्वर्था भिन्न होती है । इसलिए बाल गीत रचना में बच्चों की रुचि, प्रवृत्ति की बातों को ही स्थान मिलता है । अपने को बच्चों के व्यक्ति में खो देने की कला में जो जितना पारंगत होता है, वह उतने ही मधुर बाल गीत बच्चों के लिए लिखने में समर्थ हो पाता है । इस प्रक्रिया में उसकी भाषा की समस्या भी अपने आप हल हो जाती है । वह उसी भाषा का प्रयोग करने लगता है जो बच्चों की अपनी भाषा होती है ।'

सेवक जी ने बालगीतों का वर्गीकरण निम्नलिखित चार दृष्टि से किया है -

1. आयु की दृष्टि से
2. रस की दृष्टि से
3. विषय की दृष्टि से
4. शिक्षा की दृष्टि से

मोटे तौर पर सुरेन्द्र विक्रम के मतानुसार बाल गीतों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है -

1. बच्चों के प्रतिदिन के संबंध में आनेवाली वस्तुओं से संबंधित विषयों पर लिखे गए बालगीत
2. बच्चों के परिचय संबंध में आने वाले जीव जन्तु, पशु -पक्षियों से संबंधित विषयों पर लिखे गए बाल गीत
3. पेड़-पौधों और फल-फूलों पर लिखे गए बाल गीत
4. आकाश, तारे, चांद, सूर्य, हवा, पृथ्वी, जल, नदी, सागर, मैदान, पहाड़ से संबंधित विषयों पर लिखे गए बाल गीत
5. खेल-खिलौना और खेलों से संबंधित बाल गीत
6. ऋतुओं और प्राकृतिक दृश्यों से संबंधित बाल गीत
7. अभिनेय या प्रमाण बाल गीत
8. सामूहिक गीत या सह गान
9. राष्ट्रीय बाल गीत

डॉ. हरिकृष्ण देवसरे ने बालगीतों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है -

1. ऋतु गीत 2. खेलकूद के गीत 3. वंदना गीत 4. जागरण गीत 5. नए गीत

6. शिशु गीत तथा लोरियां

इनके अतिरिक्त गिनती के गीत, नए गीत, हास्य गीत भी बच्चों के लिए लिखे जा सकते हैं ।

11.4.2 बाल कहानी

कहानी एक ऐसी विधा है जिसमें बच्चे सर्वाधिक रस लेते हैं । हर आयु वर्ग के बच्चे अपनी-अपनी रुचि के अनुकूल कहानियां सुनना पसंद करते हैं । यह सत्य है कि कहानियां बच्चों को अपनी ओर आकृष्ट करती हैं, उन्हें रिझाती है तथा कल्पना के नए लोक में ले जाती हैं । अच्छी कहानियों के माध्यम से बच्चों को सत्प्रेरणा मिलती है जो उनके भावी जीवन में बहुत लाभदायक सिद्ध होती है।

बच्चों की अभिरुचियों को ध्यान में रखते हुए बाल कहानी का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है -

1. लोक कथाएं
2. पौराणिक कहानियां
3. उपदेशात्मक कहानियां
4. ऐतिहासिक कहानियां
5. साहसिक कहानियां
6. वैज्ञानिक कहानियां
7. जासूसी कहानियां
8. पशु-पक्षियों की कहानियां
9. मुहावरों की कहानियां
10. गीत कथाएं
11. परी कथाएं
12. आधुनिक परिवेश की कहानियां आदि

प्राचीन काल की अधिकांश कहानियां द्विअर्थक हुआ करती थीं । बच्चे उन कहानियों का अर्थ अपने स्तर से लगाते थे और बड़े अपने स्तर से । ऐसी बात लोक कथाओं में अधिक देखने को मिलती हैं । इधर प्राचीन और नवीन बाल कहानियों को लेकर विद्वानों में बहुत मतभेद है । यही बात परीकथाओं के संदर्भ में भी कही जा सकती हैं । एक वर्ग का मत है कि - 'परीकथाएं हमारी धरोहर हैं अत: हम उनका बहिष्कार किसी भी कीमत पर नहीं कर सकते हैं । जबकि दूसरे वर्ग का मत है कि अब वह जमाना गुजर गया जब हम बच्चों को कहानियों के माध्यम से परीकथाएं, कल्पोल-कल्पित कथाएं देकर कल्पना के सब्जबाग दिखाया करते थे । आज का बच्चा यथार्थ में जी रहा है, उसे यथार्थवादी कहानियां ही दी जानी चाहिए ।

यहां यह तथ्य बिल्कुल स्पष्ट है कि पहले की अपेक्षा आज का बालक अधिक जागरूक है । वह हर बात को आंख बंदकर स्वीकार नहीं करता है वह ऊल-जलूल परीकथाओं या भूत-प्रेतों की कहानियों पर प्रश्नचिह्न लगाता है और अपना संदेह प्रकट करने में भी नहीं चूकता है । जो कथानक बच्चों की कल्पना और परिवेश से नहीं जुड़ते हैं वह उन्हें सहज ही नकार देता है । किसी परी द्वारा जादू की छड़ी घुमाकर महल बनाना आज के बच्चों की कल्पना में संभव नहीं है ।

एक समय था जब बच्चों के स्वप्न में सुन्दर परियां आया करती थीं । आज बच्चों के स्वप्न में कम्प्यूटर, रोबोट आया करते हैं । विज्ञान के बढ़ते हुए चरण, दूरदर्शन का बढ़ता हुआ प्रभाव बच्चों को परीकथाओं तक पहुँचने ही नहीं देता ।

अच्छी कहानियों से बच्चों को न केवल प्रेरणा मिलती है अपितु उन्हें भावी दिशा-निर्देश भी प्राप्त होते हैं । आज की कहानियां बच्चों के परिवेश, उनकी समस्याओं, उनकी कठिनाइयों के साथ-साथ निराकरण के अधिक निकट है । आज बाल कहानीकारों ने इस तथ्य को अच्छी तरह समझ लिया

है कि कहानी का कथानक बच्चों के परिवेश से जुड़ा होना चाहिए । कहानी के पात्र बच्चे ही हों, घटनाएं भी उनके पास-पड़ोस से मेल खाती हों तथा जिज्ञासा कल्पनाएं और भावनाएं भी बच्चों के अनुरूप होनी चाहिए ।

अच्छी बाल कहानियों में संवाद अदायगी का भी बड़ा महत्व है । कहानीकार को कभी बच्चों की कहानियों में अपना पांडित्य प्रदर्शन नहीं करना चाहिए । सीधे और सरल संवाद बच्चों को प्रभावित करते है । कहानीकार को सपाट बयानी से बचना चाहिए परंतु कथ्य इतना पेचीदा भी न हो कि बच्चे उसकी भूलभुलैया में भटककर कहानी के वास्तविक उद्देश्य से भटक जाएं । आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई कहानी का निर्वाह आदि से अंत तक आत्मकथात्मक शैली में ही होना चाहिए ।

11.4.3 बाल उपन्यास

हिन्दी में बाल उपन्यासों का उद्भव और विकास अंग्रेजी साहित्य से हुआ । आरंभ में रॉबिन्स क्रूसो, सिंदबाद जहाजी, ट्रेजर आइलैण्ड आदि के हिन्दी अनुवादों तथा 'अलीबाबा चालीस चोर' तथा 'रॉबिनहुड' जैसी लम्बी कहानियों द्वारा उपन्यासों की पूर्ति की गई । स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद बच्चों के लिए मौलिक उपन्यास लिखने की परंपरा शुरू हुई । सन्1952 में 'बालसखा' में भूपनारायण दीक्षित का बाल उपन्यास 'खड़-खड़ देव' प्रकाशित हुआ । इसके बाद दयाशंकर मिश्र दद्दा का बाल उपन्यास 'दीनू बेटा' साप्ताहिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित हुआ ।

वस्तुत: बच्चों के लिए उपन्यास लेखन की शुरुआत ही स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हुई क्योंकि बच्चों के लिए लिखने वाले बड़े आरंभ में बच्चों के लिए उपन्यास उपयुक्त ही नहीं समझते थे । छठवें दशक में बाल उपन्यास लेखन में तेजी हुई । बच्चों को दृष्टि में रखकर लिखे गए उपन्यासों को प्रकाशित करने का श्रेय बच्चों की प्रमुख पत्रिकाओं 'नंदन' तथा 'पराग' को है । 'धर्मयुग' तथा 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' ने भी बाल जगत, और फुलवारी स्तंभों में अनेक रोचक और महत्वपूर्ण उपन्यास प्रकाशित किए । 'पराग' में प्रकाशित आबिद सुरती का 'बहत्तर साल का बच्चा', के पी. सक्सैना का 'खलीफा तरबूजी', देवराज दिनेश का 'नागराज वासुकि', मुद्राराक्षस का 'चींटी पुरम के भूरेलाल', डा. श्रीप्रसाद का 'शाबाश श्यामू, सत्य प्रकाश अग्रवाल का 'एक डर : पांच निडर', डा. हरिकृष्ण देवसरे का 'चंदामामा दूर के' अवध अनुपम का 'शेर का पंजा' आदि उल्लेखनीय उपन्यास है ।

इनके अतिरिक्त 'नंदन' में प्रकाशित डॉ. लक्ष्मीनारायणलाल का उपन्यास 'हरी घाटी',' धर्मयुग' में प्रकाशित मनहर चौहान का धारावाहिक उपन्यास 'जादुई खड़िया',' साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में प्रकाशित द्रोणवीर कोहली का उपन्यास ‘करामाती कद्दू’ तथा 'शशिप्रभा शास्त्री का उपन्यास 'सुनहरा' राष्ट्रदूत में धारावाहिक रूप में प्रकाशित हरफूल सुईवाल का उपन्यास 'बंदगली का मकान' बच्चों में बहुत लोकप्रिय हुए ।

पत्र-पत्रिकाओं के अतिरिक्त प्रकाशकों ने भी बच्चों के लिए अनेक रोचक और मनोरंजक उपन्यास प्रकाशित किए । इस दिशा में सबसे उल्लेखनीय प्रयास शकुन प्रकाशन का रहा । यहाँ से बालोपयोगी सभी प्रकार के उपन्यास प्रकाशित हुए जिनमें ऐतिहासिक उपन्यास'मत चूके चौहान' (सुशील कुमार) ', आल्हा ऊदल' (हरिकृष्ण देवसरे), 'एक कटोरा पानी' (राधेश्याम प्रगल्भ), रामायण महाभारत कालीन उपन्यास 'लवकुश' (कुणाल श्रीवास्तव), 'अभिमन्यु' (राधेश्याम प्रगल्भ), गंगापुत्र (व्यथित हृदय),

जासूसी उपन्यास 'पुराने किले का रहस्य' (राजकुमार अनिल), हीरों की चोरी (अशोक शर्मा), 'नन्हे जासूस' (रत्न प्रकाश 'शील'), वैज्ञानिक उपन्यास 'चांद से आगे' (ओमप्रकाश) 'शनिलोक' (विभा देवसरे), 'रेडियो का सपना' (योगेश गुप्त), समस्या प्रधान सामाजिक उपन्यास 'मां का आंचल' (शांति भटनागर), 'कानून मजबूर है' (राधेश्याम प्रगल्भ), 'बच्चों के सौदागर' (वीर कुमार अधीर) आदि उल्लेखनीय है । यही से अंतरराष्ट्रीय बालवर्ष में राधेश्याम प्रगल्भ के संपादन में 'बच्चों के बारह उपन्यास' संकलन भी प्रकाशित हुआ ।

शकुन प्रकाशन के अतिरिक्त चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट तथा नेशनल बुक ट्रस्ट से भी अनेक उपन्यास छपे । उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान से भी बाल उपन्यास को लेकर चिंतन मनन जारी है । उमेश प्रकाशन ने 'किशोर उपन्यास माला' के अंतर्गत लगभग 60 ऐतिहासिक उपन्यास प्रकाशित किए । आज बाल उपन्यास बच्चों में बहुत लोकप्रिय है, परन्तु पर्याप्त मात्रा में बाल उपन्यासों का न छपना चिंता की बात है । हास्य का पुट देकर लिखे गए बाल उपन्यास बच्चों का भरपूर मनोरंजन करते हैं

11.4.4 बाल नाटक एवं बाल रंगमंच

हिन्दी में बच्चों के लिए नाटक लिखने की परंपरा भारतेन्दु युग से ही शुरु हो गई थी । स्वयं भारतेन्दु जी ने 'सत्य हीरश्चन्द' तथा 'अंधेर नगरी-चौपट राजा' जेसे बालोपयोगी नाटक लिखे तथा अन्य रचनाकारों को बाल नाटक लिखने के लिए प्रेरित किया । भारतेन्दु जी के पश्चात् सन् 1917 में नर्मदा प्रसाद मिश्र ने अपने संपादन में मिश्रबंधु कार्यालय, जबलपुर से 'सरल नाटकमाला' पुस्तक प्रकाशित की जो विद्यार्थियों को बहुत पसंद आई । इनका उद्देश्य था - नाटकों में अश्लीलता का अनुचित श्रंगार रस न आए - स्त्री पात्र न आए, - परदों का विशेष उलझाव न हो, - यथा संभव शिक्षा मिले ।

इस नाटकमाला के उपरांत छिटपुट नाटक और प्रकाशित हुए । सन् 1930 में 'बालसखा' में रामानुजलाल श्रीवास्तव का नाटक 'दयालु लड़का' प्रकाशित हुआ था जिसमें बालोपयोगी नाटक के सभी तत्व विद्यमान थे । पत्र-पत्रिकाओं में मौलिक नाटकों के अतिरिक्त कुछ अनुदित नाटक भी प्रकाश में आ चुके थे ।

स्वतंत्रता पूर्व के साहित्य में बाल नाटकों की जो स्थिति थी वह कोई महत्वपूर्ण उपलब्धि नहीं मानी जा सकती । छठवें दशक में बाल नाटक लेखन के क्षेत्र में कुछ प्रगति हुई । सन्1955 में जबलपुर से नर्मदा प्रसाद खरे की 'बाल नाटकमाला' आई । सन् 1963 में कमलेश्वर का 'पैसों का पेड़' बाल एकांकी संग्रह प्रकाशित हुआ । इसी दशक में व्यथित हृदय का 17 बाल एकांकियों का संग्रह 'सबेरे के फूल' आया । सातवें दशक के प्रारंभ में ही श्रीकृष्ण और योगेन्द्र कुमार लल्ला के संपादन में 'प्रतिनिधि बाल एकांकी' प्रकाशित हुआ ।

आठवें दशक में बाल नाटकों की प्रगति संतोषजनक कही जा सकती है । इस काल में लिखी गई महत्वपूर्ण कृतियों में श्री कृष्ण का 'अनिल और अंजलि' (1970), चन्द्रशेखर का 'कमल और केतकी' (1971), मस्तराम कपूर 'उर्मिल' का 'बच्चों के नाटक' (1971), सेवकराम का 'फूल और कांटे' (1972), स्वदेश कुमार का 'लाल गुलाब' (1973), लक्ष्मीनारायण लाल का 'बुद्धिमान गधा' (1974) तथा उमाकांत मालवीय का 'फूलों की सभा' (1977) आदि उल्लेखनीय है ।

आज बाल नाटकों का पर्याप्त विकास हो चुका है । अब वीरता, साहस, त्याग और बलिदान के अतिरिक्त बच्चों की समस्याओं को लेकर भी बाल नाटक लिखे जा रहे हैं । बाल नाटक और बाल रंगमंच का अन्योन्याश्रित संबंध है, परंतु यह खेद की बात है कि बाल रंगमंच की ओर लोगों का ध्यान बहुत कम ही गया है । जबकि बच्चों के व्यक्तित्व का विकास और उनमें आत्मविश्वास जगाने में बाल रंगमंच का बहुत बड़ा योगदान हो सकता है । बाल रंगमंच की आवश्यक्ता को देखते हुए लखनऊ मे बंधु कुशावर्ती ने 'बाल रंगमंच' नामक एक लघु पत्रिका निकाली थी । इसके अतिरिक्त कुशावर्ती ने बाल रंगमंच के विकास के लिए बाल रंगमंच को लेकर विभिन्न पत्र / पत्रिकाओं में अनेक लेख लिखे हैं तथा कई संगोष्ठियां कराई हैं । अंतरराष्ट्रीय बाल वर्ष में बालरंगमंच को लेकर कुछ प्रयास किए गए थे, परन्तु अभी भी उसकी प्रगति बहुत उत्साहवर्द्धक नहीं है ।

11.4.5 बाल जीवनी

जीवनी साहित्य बालकों की रुचि बढ़ाने, उनकी जानकारी का क्षेत्र विकसित करने, उन्हें चरित्र-निर्माण की ओर ले जाने तथा नई-नई प्रेरणा देने की दिशा में बड़ा महत्वपूर्ण कार्य करता है । बच्चों के लिए जीवनी साहित्य का महत्व इसलिए बढ़ जाता है कि बच्चे श्रेष्ठ जीवनियों को पढ़कर उनके अनुरूप अपने को ढालने का प्रयास करते हैं । इसलिए बच्चों के लिए जीवनी साहित्य लिखते समय इस बात का ध्यान रखना आवश्यक हो जाता है कि उनका बच्चों के जीवन पर क्या प्रभाव पड़ेगा । बाल जीवनियों को पढ़ते समय बच्चों के मन में यह सत्य विद्यमान होता है कि वे जो कुछ जिनके बारे में पढ़ रहे है वैसा सचमुच ही हुआ है । इसलिए सारी घटनाओं, विशेषताओं तथा गुणों के प्रति उनके मन में एक सहज जिज्ञासा तथा विश्वास होता है ।

बच्चों के लिए जीवनियां लिखने की शुरूआत भारतेन्दु युग में ही हो गई थी । देवी प्रसाद मुंसिफ लिखित 'मानसिंरी (1889), ‘उदयसिंह महाराणा’ (1893) इस परंपरा की आरंभिक कड़ियां थीं । परन्तु इसका विकास आगे चलकर द्विवेदी युग में हुआ । स्वयं द्विवेदी जी ने सन् 1938 में 'चरित्र चित्रण' नामक पुस्तक लिखी थी जिसका प्रकाशन प्रयाग से हुआ था । इस काल में रूपनारायण पांडेय का 'बाल कालिदास' 'पृथ्वीराज', ' महारथी अर्जुन', ' प्रतापी परशुराम' तथा मन्नन द्विवेदी गजपुरी 'भारतवर्ष के महापुरुष' पुस्तक प्रकाशित हुई ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् बाल जीवनी साहित्य में तेजी आई । इसका प्रमुख कारण यह था कि भारत को स्वाधीन कराने में जिन महापुरुषों ने अपनी भूमिका निभाई थी । बच्चे भी उन महापुरुषों के बारे में जानने के लिए उत्सुक हो गए । फलत: राजपाल एण्ड संस, राजकमल प्रकाशन, सर्वोदय प्रकाशन मंदिर, हिन्दी प्रकाशन मंदिर, पुस्तक भंडार, अजन्ता प्रेस, सस्ता साहित्य मंडल आदि प्रकाशन संस्थानों से ढेर सारी बालोपयोगी महापुरुषों की जीवनियां प्रकाशित हुई ।

सातवें दशक में जो कृतियां आई उनमें जब ये बच्चे थे (बाल कृष्ण) बापू की बातें (विष्णु प्रभाकर) महापुरुषों के बीच (जगदेव पांडेय) ऐसे थे हमारे बापू (जय प्रकाश भारती) आदि उल्लेखनीय है । सन् 1963 में रामेश्वर दयाल दुबे ने 'मां यह कौन ?' पुस्तक में सरल भाषा में कबीर, सूर, तुलसी, शिवाजी, महाराणा प्रताप, गांधी जी आदि भारत के सामाजिक और राजनीति व्यक्तियों की महानता तथा उनकी जीवन झांकी, बेटी की जिज्ञासा और मां के उत्तर के रूप में प्रस्तुत किया है । नेशनल बुक ट्रस्ट दिल्ली

ने सन् 1968 में 'नेताजी सुभाष चन्द्र बोस (मन्मथनाथ गुप्त- सन् 1969) में ' गुरुनानक (महीप सिंह) सन् 1970 में तथा 'झांसी की रानी : लक्ष्मी बाई' प्रकाशित किया ।

आठवें, नवें दशक में देश के अनेक महापुरुषों की जीवनियां प्रकाश में आई । अधिकांश प्रमुख राजनीतिज्ञों, वैज्ञानिकों, साहित्यकारों, देशभक्तों तथा संतों को आधार बनाकर उनकी रोचक जीवनियां प्रकाश में आ चुकी हैं । परन्तु इस क्षेत्र में अभी संगीतकारों अमर शहीदों, शिल्पियों, चित्रकारों तथा अन्य प्रमुख कलाकारों के बारे में रोचक और प्रभावशाली जीवनियों की अपेक्षा है ।

11.4.6 स्फुट बालोपयोगी लेखन

बालकों के लिए अनेक विषय ऐसे हैं जिन पर स्फुट रूप से लेखनी चलाई जा सकती है इनमें से डॉ. सुरेन्द्रविक्रम के अनुसार निम्नलिखित विषय गिनाए जा सकते हैं -

1. चुटकुले	2. पहेलियां
3. यात्रावर्णन	4. संस्मरण
5. वैज्ञानिक बाल साहित्य	6. बाल पाकेटबुक्स

स्फुट बालोपयोगी लेखन के अंतर्गत हम चुटकुले, पहेलियां, यात्रा वर्णन, वैज्ञानिक बाल साहित्य, संस्मरण रिपोर्ताज तथा बाल पॉकेट बुक्स आदि का उल्लेख कर सकते हैं ।

चुटकुलों और लतीफों के सुनाने की परंपरा हमारे देश मे प्राचीन काल से रही है । चौपाल में बैठकर बड़े बुजुर्ग लतीफे सुनाकर एक दूसरे का मनोरंजन किया करते थे । चुटकुला एक ऐसी कला है जो दु:ख में डूबे हुए व्यक्ति को भी पल भर के लिए हंसा देता है । यह बिल्कुल सत्य है कि चुटकुलों से बच्चों का भरपूर मनोरंजन होता है । इसी उद्देश्य से रेडियो और दूरदर्शन के बाल कार्यक्रमों में चुटकुलों को अवश्य स्थान दिया जाता है । इस दिशा में प्रकाशित कृतियां है - स्नेह अग्रवाल की 'हंसिए हंसाइए', कमला मेहरोत्रा की 'बीरबल की खिचड़ी' तथा अजीत की 'बीरबल की बातें' तथा 'बच्चों के जोक्स' ।

पहेलियां बच्चों का भरपूर मनोरंजन करती हैं वैसे भी पहेली बुझाना एक कला है । पहेलियां ज्ञानवर्द्धक होने के साथ-साथ विचारोत्तेजक भी होती हैं । यही नहीं, पहेलियां बच्चों में नई सोच और संवेदना उजागर करती हैं तथा उन्हें कल्पना के घोड़े दौड़ाने में सहायता करती हैं । कुछ पहेलियां जहां एक ओर बच्चों का मनोरंजन करती हैं वहीं दूसरी ओर उन्हें गणित सीखने में भी सहायक होती हैं ।

बाल साहित्य में यात्रा वर्णनों का नितांत अभाव है । जहां बड़ों के साहित्य में ढेरों यात्रा वर्णन उपलब्ध है वहीं बाल साहित्य में गिने -चुने यात्रा वर्णन ही प्राप्त होते हैं । कन्हैयालाल नंदन ने अपने संपादन काल में पराग में कुछ अच्छे यात्रा वर्णन देकर इस अभाव की पूर्ति की थी, परन्तु यह प्रयास ऊंट के मुंह में जीरा की तरह ही है ।

विज्ञान के जटिल विषयों को बालोपयोगी बनाकर प्रस्तुत करने की दिशा में स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व ही कार्य प्रारंभ हो चुका था । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इस कार्य में और तेजी आई । विभिन्न प्रकाशन संस्थानों ने अनेक महत्वपूर्ण बालोपयोगी वैज्ञानिक पुस्तकों का प्रकाशन किया है । राधेश्याम प्रगल्भ, रामचन्द्र तिवारी, गुणाकर मुले, शुकदेव प्रसाद, रमेशदत्त शर्मा, डॉ. हरिकृष्ण देवसरे की वैज्ञानिक विषयों की पुस्तकें बच्चों द्वारा बहुत पसंद की गई ।

बच्चों में अध्ययन के प्रति बढ़ती हुई रुचि ने हिन्दी में बाल पॉकेट बुक्स को जन्म दिया । इन पॉकेट बुक्स सीरीज में ऐसी कहानियां तथा उपन्यास छापे गए जो कुछ देर की बैठक में पढ़े जा

सके । इस दिशा में शकुन प्रकाशन ने लगभग 200 पुस्तकें प्रकाशित की । ये पुस्तकें बच्चों में इतनी लोकप्रिय हुई कि उनके अब तक कईकई संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं । इसके अतिरिक्त राजू पब्लिकेशन्स (कलकत्ता), ज्ञान भारती (लखनऊ), अलका बाल पॉकेट बुक्स (इलाहाबाद), सुमन बाल पॉकेट बुक्स (दिल्ली), डायमण्ड पॉकेट बुक्स (दिल्ली) आदि ने इस दिशा में सफलता प्राप्त की ।

बाल पॉकेट बुक्स की शुरूआत तो अच्छी रही । परंतु आगे चलकर इस क्षेत्र में कुछेक प्रकाशकों को छोड़कर शेष को घाटा उठाना पड़ा । धीरे- धीरे इसका परिणाम यह हुआ कि उनके व्यवसाय में रुकावट आ गई । आज बाल पॉकेट बुक्स लगभग समाप्त प्राय है । बाल साहित्य की विविध विधाओं में प्रतिवर्ष सैकड़ों की संख्या में पुस्तकें छपती है परन्तु समीक्षा एवं आलोचना के अभाव में उनकी अपेक्षित चर्चा नहीं हो पाती है ।

11.5 बाल-लेखन में ध्यान रखने योग्य बातें

बच्चों के लिए लेखन की सबसे महत्वपूर्ण कसौटी यह है कि रचनाकार जिस विषय का चयन करें उसका संबंध सीधा बच्चों से हो । इस दृष्टि से बाल साहित्य के लेखन एवं चुनाव के लिए आवश्यक हो जाता है कि -

1. लेखक बच्चों के व्यक्तित्व के विकास की विभिन्न अवस्थाओं में मनोविज्ञानिक विशेषताओं का विशेष रूप से अध्ययन करें ।

2. बाल साहित्य लेखन में बालकों की मानसिकता, उनकी अभिरुचि, रचनाओं के घटनाक्रमों को समझ सकने की क्षमता आदि का ज्ञान बहुत आवश्यक है । उसमें प्रेम का प्रदर्शन-मानव प्रेम, प्रकृति प्रेम तथा देशप्रेम के रूप में -हो तथा क्रोध का प्रदर्शन अत्याचार एवं अनाचार के विरोध के रूप में हों ।

3. बाल साहित्य में दण्ड, आतंक, हिंसा, प्रतिशोध एवं क्रूरता के स्थान पर प्रेम, सहानुभूति, सहयोग एवं कोमलता के उदाहरण मिलने चाहिए जिसे पढ़कर बालक में आत्मसम्मान एवं महत्वाकांक्षा की भावना जाग्रत हो ।

4. सौन्दर्य भावना के विकास की दृष्टि से बच्चों को मानव तथा प्रकृति प्रेम संबंधी उद्‌बोधक रचनाएं दी जानी चाहिए ।

5. बाल साहित्य में ऐसे विषयों का प्रतिपादन हो जो सामाजिक मूल्यों की रक्षा करने वाले हों । जैसे अपराधी को दण्ड अवश्य मिलना चाहिए ।

6. बाल साहित्य में विविधताओं का होना अनिवार्य है क्योंकि बच्चों की रुचियों में विविधताओं का समावेश रहता है ।

7. बच्चों के लिए कविताएं लिखते समय तो इस बात को अवश्य ध्यान देना चाहिए कि उसकी अभिव्यक्ति मौलिक होनी चाहिए । तुक मिलाने के चक्कर में गलत शब्द या अपशब्द का प्रयोग बिल्कुल नहीं होना चाहिए । वैज्ञानिक विषयों को इस ढंग से समझाकर प्रस्तुत करना चाहिए कि बच्चे आसानी से समझते चले।

8. बच्चों के लिए लेखन में भाषा- शैली का बड़ा महत्व है क्योंकि बोझिल भाषा और उबाऊ शैली बच्चों को कभी भी नहीं भाती है । सहज और सरल भाषा से वे कठिन विषयों को भी आसानी से आत्मसात कर लेते हैं।

11.6 कुछ सुझाव

आज इक्कीसवीं सदी की दहलीज पर खड़े बच्चे जहां एक ओर बस्ते के भारी भरकम बोझ से आक्रांत हैं यही दृश्य एवं श्रव्य माध्यम के बढते हुए शिकंजे ने उनसे उनका बचपन सहज ही छीन लिया है । कुकुरमुत्ते की तरह उग आए अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों ने खेलने कूदने की उम्र में बच्चों को तनाव में जीने के लिए मजबूर कर दिया है । ऐसी परिस्थिति में यह बड़ा-ज्वलंत प्रश्न है कि बच्चों के लिए लेखन कैसा हो ? उन्हें पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त कौन-सा बाल साहित्य प्रदान किया जाए, जिनसे एक ओर उनका मनोरंजन हो तथा दूसरी ओर वे अपने भावी जीवन की दिशा तय कर सकें। वे बाल साहित्य क्यों पढ़े ? उसमें ऐसी बात होनी ही चाहिए जिनसे बच्चों का रागात्मक संबंध हो।

बाल साहित्य लेखकों हेतु निम्न लिखित सुझावों पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए -

1. आज का बालक पूर्णत: वैज्ञानिक युग में जी रहा है, जिसमें यांत्रिकता पूरी तरह से हावी है। बच्चा अपने मन में भांति-भांति के नए-नए सपने संजोए हुए है । वह अंतरिक्ष में विस्फोट की कल्पना करता है । बच्चा एक ओर 'रोबोट' की बात करता है तो दूसरी ओर कंप्यूटर उसके जीवन में रच-बस गया है । इस माहौल में चूहा-बिल्ली, बंदर, भालू तोता, मैना तथा मौसमी कविताएं, कपोल कल्पित परीकथाएं, बासी और उबाऊ कथानक की भूत की कहानियां बच्चों को कितनी पसंद आएंगी, यह विचारणीय बिन्दु हैं ।
2. आज बालक तथा उसकी समस्याओं, उसके साहित्य और उसकी पाठ्यपुस्तकों को लेकर गहराई से सोचने की आवश्यकता है । एक समय था जब बच्चों को पंचतन्त्र, हितोपदेश, ईसप की कथाएं तथा दादी-नानी की कहानियों के अतिरिक्त पढ़ने के लिए कुछ भी नहीं मिलता था । उन्हें आसानी से उपदेशपरक रचनाएं परोस दी जाती थी । परंतु आज बच्चों में बहुत बदलाव आया है । इस बदलाव को बाल साहित्य लेखन में जीने की आवश्यकता है ।
3. बच्चों की कविताओं के प्रति रुचि बरकरार रखने के लिए आवश्यक है कि उन्हें एक ओर कविता के माध्यम से नए-नए विषयों में जोड़े, वहीं दूसरी ओर बाल कविताओं में नए-नए बिम्बों और प्रतीकों का भी समावेश हो ।
4. बच्चों की बात उन्हीं की भाषा- शैली में कहना एक कला है । कब कौन-सा बच्चा सोचता है, उसके मन की बात पकड़ना आसान नहीं है । यह श्रमसाध्य कार्य है । इसी मनोविज्ञान को परखना बाल साहित्यकार की सफलता है । अगर बच्चों को उनके बदलाव, उनकी अभिरुचि, परिवेश तथा सोच से जुड़ी हुई कविताएं दी जाएंगी तो बच्चे उन्हें रुचि से मन लगाकर तो पढ़ेंगे ही, उनसे स्वयंमेव जुड़ते भी चले जाएंगे ।
5. आज की बाल कहानियां आदर्श की दुनिया से नीचे उतरकर यथार्थ के धरातल पर लिखी जा रही है । उनमें बच्चों की भावनाओं को परखने की क्षमता अधिक है । आज की कहानियां, बच्चों के परिवेश, उनकी समस्याओं, उनकी कठिनाइयों के साथ-साथ निराकरण के अधिक निकट है ।

   लेखकों के लिए कुछ ऐसे सूत्र यहां दिए जा रहे हैं जिनसे उन्हें बच्चों के लिए कहानियां लिखने में मदद मिलेगी -

1. बाल कहानी आपसी बोलचाल और संवाद की भाषा में लिखी जानी चाहिए ।

2. बाल कहानी की विषयवस्तु ऐसी हो जिसका उनके कोमल मन पर अनुकूल प्रभाव पड़े ।
3. बाल कहानी में उबाऊपन का निषेध हो, अनावश्यक विस्तार से बच्चे ऊब जाते हैं ।
4. बाल कहानी बच्चों के परिचित जगत से ही प्रारंभ की जाए । उसमें ऐसे पात्र हों जिन्हें बच्चों की जानने में अधिक श्रम न करना पड़े ।
5. बाल कहानियों में जिज्ञासा होना अनिवार्य है क्योंकि बालकों में कौतूहल का स्वाभाविक गुण विद्‌यमान रहता है ।
6. बाल कहानियों में मात्र मनोरंजन नहीं होना चाहिए । उनमें जीवन के आचार-विचार, व्यवहार, संवेदनाएं तथा शिक्षा आदि तत्व समाहित होने चाहिए ।
7. बच्चे वर्तमान परिवेश में रहते हैं । इसलिए कहानियों की कथावस्तु उनके वर्तमान परिवेश से ही ली जानी चाहिए ।
8. बाल कहानियों में अगर पात्र बच्चे ही हो तो वे उन्हें अधिक पसंद करते हैं ।
9. बाल कहानियों का समापन सुखद होना चाहिए तथा उसके पीछे कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होना चाहिए ।
10. बाल कहानियों में संदेश तो होना चाहिए परंतु उपदेश से बचना चाहिए ।

11.7 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि बाल साहित्य भी साहित्य की स्वीकृत विधा है । बच्चों के लिए लिखने से आवश्यक है कि लेखक बच्चों का मनोविज्ञान, उनका परिवेश, उनकी मनोस्थिति का बारीकी से अध्ययन करें, क्योंकि बच्चें के लिए लिखना बड़ों के लिए लिखने की अपेक्षा अधिक कठिन है । जब तक लेखक स्वयं बच्चा बनकर उनकी अनुभूतियों से नहीं जुड़ता है तब तक वह सार्थक और स्वस्थ बाल साहित्य लिख ही नहीं सकता है ।

बाल साहित्य लेखन की पुरानी परंपरा है । इसकी विकास यात्रा आज एक शताब्दी को पार कर चुकी है । कविताएं, कहानियां, नाटक, उपन्यास, बाल जीवनी साहित्य तथा चुटकुले, पहेलियां, वैज्ञानिक बाल साहित्य का विपुल भंडार भरा पड़ा है । इसके बावजूद भी आज बाल साहित्य की आवश्यकता महसूस की जा रही है, क्योंकि साहित्य समाज का दर्पण होता है । समाज में जो कुछ भी घटित हो रहा है, साहित्य में उसका प्रतिफलन आवश्यक है । बाल साहित्य भी इसका अपवाद नहीं है । आज बच्चों के लिए जो लिखा जा रहा है उसमें विविधता है, संभावनाओं की तलाश है तथा बच्चों को कुछ नया देने की कोशिश है । बाल साहित्य बच्चों का सच्चा मित्र, कुशल उपदेशक तथा सही मार्गदर्शक होता है । पाठ्‌य साहित्य में भी बाल साहित्य का महत्व असंदिग्ध है । बल्कि पाठ्‌य पुस्तकों में जो कुछ नहीं पढ़ाया जाता है, बाल साहित्य उस कमी को पूरा करता है ।

पाश्चात्य समीक्षक वसीली सुखोम्लीन्स्की के शब्दों में यह सकते हैं कि- 'बाल साहित्य बच्चों के लिए अजीबोगरीब, रोमांचक तथा प्रेरक घटनाओं का विवरण ही नहीं होता है अपितु उनके लिए तो यह एक पूरा संसार होता है जिसमें वे रहते हैं, संघर्ष करते है, बुराई का अपनी अच्छाई से मुकाबला करते हैं । कथा कहानियों में बच्चे की आत्मिक शक्ति को शब्दों में अभिव्यक्ति मिलती है, वैसे ही जैसे खेलकूद में गति और संगीत में धुन उसे व्यक्त करती है । बच्चा कहानी सुनना ही नहीं चाहता,

बल्कि सुनाना भी चाहता है, जैसे कि वह गीत सुनना ही नहीं चाहता, बल्कि गाना भी चाहता है, खेल देखना ही नहीं चाहता, खेलना ही चाहता है ।'

11.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. डा. इन्द्रसेन शर्मा संपादक - बाल साहित्य : निर्माण एवं मूल्यांकन
2. डा. सुरेन्द्र विक्रम - समकालीन बाल साहित्य : परख और पहचान
3. डा. सुरेन्द्र विक्रम - हिन्दी बाल साहित्य : विविध परिदृश्य
4. डा. सुरेन्द्र विक्रम - बाल साहित्य : शोध समीक्षा संदर्भ
5. रमाकांत श्रीवास्तव - भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम (संपादित)
6. डॉ. हरिकृष्ण देवसरे - हिन्दी बाल साहित्य : एक अध्ययन
7. डॉ. श्रीप्रसाद - हिन्दी बाल साहित्य की रूपरेखा
8. डॉ. श्रीप्रसाद - बाल साहित्य की अवधारणा
9. डा. विजयलक्ष्मी सिन्हा - आधुनिक हिन्दी में बाल : साहित्य का विकास
10. डॉ. कुसुम डोभाल - हिन्दी बाल काव्य में प्रतीक एवं कल्पना तत्व
11. निरंकार देवसेवक - बालगीत साहित्य : इतिहास एवं समीक्षा
12. मनोहर वर्मा - भारतीय बाल साहित्य : एक विवेचन (संपादित)
13. डॉ. मधु पंत - 'त्रिविधा ', 'त्रिधारा', 'त्रिपदा' एवं 'त्रिपथगा' (संपादित)

11.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. बाल साहित्य क्या है ? बड़ों के लिए लेखन तथा बच्चों के लिए लेखन में अंतर स्पष्ट कीजिए?

   अथवा

   'बच्चों के लिए लेखन बड़ों के लिए लेखन से अधिक कठिन है- ' इस कथन की विवेचना कीजिए?
2. बाल साहित्य सृजन सोद्देश्यपूर्ण लेखन का ही एक अंग है - स्पष्ट कीजिए ।
3. बाल साहित्य के विविध रूपों पर प्रकाश डालिए !
4. बाल साहित्य का संक्षिप्त इतिहास बतलाइए ?
5. बच्चों के लिए लेखन में कौन-कौन सी सावधानियां बरतनी आवश्यक है ?
6. टिप्पणियां लिखिए -

   (क) बाल काव्य में नए प्रयोग

   (ख) बाल साहित्य समीक्षा : स्थिति, समस्याएं संभावनाएं

   (ग) बाल कल्याण में बाल साहित्य की भूमिका

   (घ) बाल साहित्य और पाठ्यपुस्तकें

   (ङ) (ड) आपका बच्चा, दूरदर्शन और बाल साहित्य

   (च) स्फुट बालोपयोगी लेखन

11.10 परिशिष्ट

कुछ पठनीय पुस्तकें

1. बालगीतायन : द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी (1975), प्रकाशक : ज्वाला प्रसाद विद्यासागर जीरो रोड़, इलाहाबाद
2. बच्चों की 100 कविताएं : संपादक-डॉ. हरिकृष्ण देवसरे (1979), प्रकाशक : शकुन प्रकाशन, सुभाष मार्ग, नई दिल्ली
3. बच्चों की 100 कहानियां : संपादक - डॉ. हरिकृष्ण देवसरे (1979), प्रकाशक : शकुन प्रकाशन, सुभाष मार्ग, नई दिल्ली
4. बच्चों के 100 नाटक : संपादक - डॉ. हरिकृष्ण देवसरे (1979) प्रकाशक : शकुन प्रकाशन, सुभाष मार्ग, नई दिल्ली
5. बच्चों के 12 उपन्यास : संपादक - राधेश्याम 'प्रगल्भ' (1979), प्रकाशक : शकुन प्रकाशन, सुभाष मार्ग, नई दिल्ली
6. चुने हु ए बाल गीत (दो भाग) : संपादक - डॉ. रोहिताश्व अस्थाना (1993), प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन, चावड़ी बाजार, दिल्ली
7. प्रतिनिधि बाल गीत : संपादक - डॉ. श्री प्रसाद (1995) : प्रकाशक : उ. प्र. हिन्दी संस्थान, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ
8. प्रतिनिधि बाल कहानियां: संपादक मनोहर वर्मा (1995) : प्रकाशक : उ. प्र. हिन्दी संस्थान, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ
9. महापुरुषों की जीवनियां : संपादक-लीलाधर शर्मा 'पर्वतीय' (1995) : प्रकाशक उ. प्र. हिन्दी संस्थान, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ
10. प्रतिनिधि बाल नाटक : संपादक- डॉ. हरिकृष्ण देवसरे (1996) : प्रकाशक : उ. प्र. हिन्दी संस्थान, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ
11. द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी रचनावली, भाग 2, एवं 3 (1996) : प्रकाशक : ज्वाला प्रसाद विद्यासागर, जीरो रोड़, इलाहाबाद

विश्वविद्यालय द्वारा संचालित पाठ्यक्रमों की सूची

पाठ्यक्रम का नाम		अवधि
1.	स्नातक उपाधि प्रारम्भिक पाठ्यक्रम	6 माह
2.	भोजन एवं पोषण में सर्टिफिकेट	6 माह
3.	कम्प्यूटर ज्ञान एवं प्रशिक्षण का प्रारम्भिक पाठ्यक्रम	6 माह
4.	सर्टिफिकेट इन कम्प्यूटिंग	6 माह
5.	पंचायती राज प्रोजेक्ट में प्रमाण-पत्र	6 माह
6.	संस्कृति एवं पर्यटन में प्रमाण-पत्र	6 माह
7.	महिलाओं में वैद्यानिक बोध में प्रमाण-पत्र	6 माह
8.	राजस्थानी भाषा एवं संस्कृति में प्रमाण-पत्र	6 माह
9.	बी.ए.एफ./बी.सी.एफ. (त्रिवर्षीय पाठ्यक्रम)	1 वर्ष
10.	एम.ए.(अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान, इतिहास, हिन्दी)	2 वर्ष
11.	एम.बी.ए.	3 वर्ष
12.	पी.जी.डी.एच.आर.एम.	1 वर्ष
13.	पी.जी.डी.एफ.एम.	1 वर्ष
14.	पी.जी.डी.एम.एम.	1 वर्ष
15.	पी.जी.डी.एल.एल.	1 वर्ष
16.	टी.एच.एम.	1 वर्ष
17.	डी.एन.एच.ई.	1 वर्ष
18.	डी.सी.ओ.	1 वर्ष
19.	डी.एल.एस.	1 वर्ष
20.	डी.सी.सी.टी.	18 माह
21.	बी.जे.(एम.सी.)	1 वर्ष
22.	एम.जे.(एम.सी.)	2 वर्ष
23.	बी.लिब.	1 वर्ष
24.	पर्यावरण विज्ञान में स्नातकोत्तर डिप्लोमा	1 वर्ष
25.	बी.एड.	2 वर्ष
26.	पी.एच.डी.	3 वर्ष
27.	पी.जी.डी.ई.एस.डी.	1 वर्ष